মুলাঃ— অগ্রিম বাধিক ৮॥, ডাক মাগুল সা০, হাথাসিক ৪৬, ডাকিমাগুল ५০, ত্রিমাসিক ৩, ডাক মাগুল। ১০ আনা। অন্ত্রিম বার্ধিক ১০॥০, ডাক মাগুল সা০টাকা প্রতি খণ্ড। প্রিজ্ঞাপন প্রকাশের মূলাঃ –প্রতি প ক্রি, প্রথম, দ্বিতীয় ও তৃতীয় বার ১০, চতুর্গ ও ততোধিকবার ১০ আনা। ইংরেজী প্রতি পংক্তি। আনা।

नेय जारा

किलाकां जाः २ द्रा दिक्षांश, — श्रुक्षि जियांत्र, मन ३२५० मान हे १ १०ई अट शन

३५-१७ माल।

2 भंडेग्री

विड्वाशन।

-- 20103---

श्राम क्यांत ना के।

मश्क्र ज यस्त्र, कानिर लाइ खित्र, िमा-बाजांत २৯,१० ७ ७) नः तमभग्न स्टत्त (नांकारन ७ एक न १ (जाना व मूर्था शाधारा दियं दिव शिख्या। गुला। । जाना म ज ए क माण ल । जाना

१५ नः यागाशुक्त खी युक वावृ लेली चुवन (नत वाहिए उ ভদেশ্বরে উক্ত বাবুর ডিপ্পে সরিতে:ত श शिश्वा!

3। निर्श्विति के जाग् कत । धरे गर्शिय अं जिनात उ देलांदेरी वार्शित विस्थिय देशकाती ध्वः इश

२। धीषाकालीन श्रीनग्न एवा। श्रीवर्धांख वाकिश्व एक ठांगठ शान क तल भातीत मिक्र, इड-शीकांत्रक, जाशि वृक्तिकांत्रक उ পেটেत डेगे प्रव न न क्तिर्व। मूला॥%०

७। वृश्द शिम मार्गत (जन। धरे छे कि देजन গাতে ব্যবহারে বায়ু পিত রোগ সকল বিশেষ উপ-लांड क्रिट्रा यथाः—गाथा (घाता, द्याना, शित्रः भी ए।, गां ज जाला, मतीत ज्यान जा, श्राकलां. ए क शांत पर्भ, मिखिएक के कि न डा डेमा तांथ कि, वांश उक्तांत हेजाि मूला ১

। । वाङ्बाङ (ङल इंशाङ विविध वाङ यथः को डिलि, विद्वल, कनकरन, शंक शा व्यवन, वा किंद्रिन धरा या विकास इंडेक ना (कन निक्ध रहे जा-ां भा इहेरव मृला ५०

ए। ठर्श (अंशीमि (डल। शंतल, माम कूलकर्गि, तेक कूछे, शें ছ्डा, होक, शांता घांता वा भांति विच

७। कर्न भीए। रेडल। इंश्रांड कर्न्त कर्न्त विविध भी डा, कार्षित जिन्त घा, अ तम वा भूज शंजन, वां वर्धतंजा (मांच आद्यांगा इहेदव मृला ॥०

৭। শরীর শোধক ব টকা। মেছ ধাতৃত্ব পীড়া, বহুম ত্র, শ্বেত প্রদর, শ্রী লোকের বাধক পুরতন কালী अम थिंड, खन्म, जर्भ, प्रस्ति । अ श्रक्ष शिंव शिंक ক্রিকটি রোগের ভিন্ন ২ অনুপান দিয়া দেবন করিলে ज्ताश जातिकाः इहेर्व मृला ३४

৮। शृहिनी उ तक जाधानदग्रत विका। इशंदि ভূতন বা পুরাতন আমাশর, পেটের বেদনা, কাম-उद्गिन, उ शृहिनी शीषांत छे नमा इहेरत।

৯। উপদংশ রোগ ও হার অভি উত্তম মলম॥ । পারাসংশ্লিষ্ট রহিত) নানা বিধ গ্রমির অন্যান্য था। यथ ज्ञन, श्रांडन था, नाली घा वर्ण शीषांत य घ व लिया थादक, शांताव घा, विद्याव छः बू जन घा क्रिक मश्रीद्वत मध्या आदिताता इहेदव । मूला ॥०

वम वि. (न वख डि, वन मिज, वल, वम, वम,

THE INDIAN EVIDENCE ACT 1872.

KISHONI LAL SARKAR M. A. B. L.

Price Rs. 3

This is decidedly the best edition of the Indian Evidence Act that we have yet seen Babu Kissoree Lal Sircar has spared no psins to remove the difficulties which stand the unintiated readers of the Act in the face. He has made the mark acceptable to the public generally. Law Observer.

To be had at the Amrita Bazar Putrika Office and Thecker Spink & Co's Library.

यन्पक! वांकन! ! जां जम्खा!!

व्यागता बिलां इहर्ड डे उम डे उम नन्द्रक, तांस-कल, शिखल, ज्लशांत उ मीकारतत मकल श्रकांत বিক্রোর্থে আনয়ন করিয়াছি। যাহার প্রয়োজন इहरवक जिनि, कलिकां ज्य जर नः लाल मिधित मिकिन এক শেও জের পূর্ব্য স্থিত ডি, এন, বিশ্বাস কোং দোকানে थाश इरेदन।

िष, এन, विश्वांभ এও কোং।

बीलं बीयुक यश्राका विताक वर्त्रयान প্রদেশাধিপতি বাহাত্রের

जानुत्यानिज अ जामु जा ज

<u>जि</u>ठक्कि (भारतिमनकि विशेष्ण त जोश दर्ग तिना छ । अयथालश

38७ नर लागान हिर्शून (नाष कोष्मनानी वालाथाना, कलिका छ।।

छे भरतां क अभानाता काग्र संन कार्श वा-इन। मुद्भा मुक्थिकात (तार्गत नानाविश अक्रु जिम कुं इंदेश पुरक्त देश ठक्कित मूला ५० विषय, देवल, शृं अ शांठनानि स्लब्ध मूर्ला म-र्बमा श्रेष्ठ श्राक्ष इल्या गाय जवर फरेनक छे-शयुक हिकिৎमक मर्सना ज्थां य डेगिष्ड थाकिया वावन्था श्रंक असभानि श्रामन करतन।

- बळ्मू ज शी छात मदशेष ।

इंश नियम शुक्तं क वावकांत कतित्व मामाना बल्यूज धवर (मिर्सला, इस शर्मामित जाला उ मिखिएक होनवल शङ्डि डेश प्रव मश्युक मर्स-शकांत्र मृखां शिका अ मधुरमङ् भी छ। निः दलम ना-(तांभा इया।

धक गारमत वावशासामुक छेन्थ २ कि है। ए है। क 8 ऐका !कार्च 8 टेख्ल ३ जे भागिक उ जिक्मा जल २ छे। कः कुखन व्या देवन।

इश वावशदा निक्ष क्ला शन्जा (दोक) पृत उ (कल काकाल शकडा প্রাপ্ত ना इहेशा विलिखे विश्विष्ठ उ ल्यां जायुक इस धवर मखक यूनेन

প্রভূতি শিরোরোগা আরোগা মান্তক স্থাতল ও हक्कु (ज र्राजि द्वि इय । इहा व्यक्ति मत्नाइत शक्त राज्य व युला । लिलि। इंकि। डाकगा छन । । । जान। मखुरन्धा धन ह्न।

ाशिय क्रिया वार्ष वार्ष किल्हा मर्जशकात पश्च (तार्गातार्गा, पश्चम ल जुड़, गूर्थत इर्गम मृत धनः मेख छेख्य छज वर्ग इत। ३ (को छ। ॥० फाकमा छल ।० ष्यांना

स्थार्थफ्र ।

इंडा दांता युश मधालत निक्र 5 हिरु (वाशांद (गट्ठ छ।) अ खन निन्ध्य जार्यां भा इय । एक जुक कामल उ शांतकात इहेगा गूथ को गर्गावक वर्षिड उ वर्णंत बेरकर्घ मन्मापिक इस धवर क्रूनि, मार्ग-हि, इलकानि आद्योगा इय । छेश मन् गञ्जयुक ।

3 किलि ५० डाकगाउन १०/० जाना बिविद्याम लाल मिन छथ किव्रां ज कर्माशाम ।

नानानरर्गत यून्भा विलाजी स ल्का। কলিক।তা যোড়াশাকে। চিত্তপুর রোড ৩৭৮ मश्थाक शृद्ध विक्यार्थ व्याद्ध। मूला २॥० इड्डि व शांठ छोका।

बीताशानाथ किश्ता। एए जिल्हे।

(योवदन (यातिनी। (ঐতিহাদিক দৃশ্য কাবা।)

खो(जानानम् मूर्यानाधारा शनीन। कलिकांडा, (मांडा वांजांत, ৫० नः (श खीति ख मः ऋ ज यद्वत शूखकां ल स्य थांथा, मूना 3 धिक है। को 1 एक माखन % जाना।

वक्षविद्धान। अधिक्षिक छेशनागा।

জীরমেশ্চন্দ দত্ত প্রাণীত। কলিকাতা ২৪% নং वल्वाकात की हे शोगदश्य याख, एए नः करल क की हे कार्गनिश लाहेर बहिए शाउसा गांस। मूला अव ডাক ম:শুল ১০ জানা।

> शकुड रक् गाडिक। बीयुङ खर्डान क्यांत व्रान एने जा

युला ५ धक होक! एक मा अन ८० जिन

किनिकां जा १३ नर् क लिख छि । किनिर् लाइ (बहीटड, ८नः (के अ (ताटड, अ नामम वाकांत कत (शादन शांश्वा।

ऐख् । ख (थाम ।

बीठन्य (भाशत मुर्थाशाशा श्राम श्राम बुला ३ (क होको डाक गां छल % जांगा। ०० नः करनक छोडि कार्रिनः नाईखातिए

ट 1खना।

विकाशन।

भार्षकी छत्रन मुर्थाभाश्र भारा छानी क लायनायकी नां यक को जुकावश छे अन्याम कलिका जा यां यां भूकृत (वर् ठोष्ट्रियात लिन मःऋ ७ यखित श्रुक्तिल्या) এक होका मृत्ला श्राभा।

श्राबादा।

व्यथवा छात्र छत्र स्थलि स्वन त्वरल। ना हेक।

कार्गिनः लाइ खित्रि आर्ग्यमर्भन यञ्च लार्ग धानः मःऋ ज फिलि छिति । शाश्चना यूना धक हे।का १

शाइकशाए। नर्भात ।

এই স্থানে উত্য উত্য ফল ফুল ও লতার गोष्ट ठोत्रा ७ कलग श्रञ्ज बाट्छ। य इक्ट्यत याश्व প्राराक्त वहरव मूला भागिहेटल शाहर ज शाहितम। जात (मणी अ तिलाडि शालाश शाहि ३२३ थोकादतत कनम श्रञ्ज इहेग्राट्य। इश्रद्भत उ जाना जाना शूल भार्षत এই ठिक (बांशादन मग्र ाशाहें के किं तार्थन कर्तिल इंशामित मतियांत कान मखानना थाक ना। जाशत णात जल निय तीष्ठ वीष्ठिष्ठ इया अथात्न भीट्य प्र অভিশয় সুলভ এরপ আর কোন স্থানে পাওয় व्याष्ट्र कत्रश्र कतिया व्याग्य श्रेष्ठ भागि । अकरलत नाग ७ नम्न किय़ा छेख्य ऋला वाद्य भागक करिया थिनि य क्रिश विलिद्यन (इटल, इंछिगाद वा लोकांग्र लांग्राहेगा निया निकास छत्रमा कति मिट्नांत हो जा जिमिनांत ए वछ लोकभेन यज्ञ मङ्काःत धरे जां जी स नर्गात रहे जि य य वार्ग तन वार्य माकी स शोष्ट्र मकल जवभाइ लहेर्बन। शोष्ट्र नाम अ परत्र তালिका इंश्त्रां कि তে ছাপান আছে আবশ্যক इইলে विना मूटला शार्का है द्वा पिन ।

विथात्न मर्स श्रकांत (मर्भो उ विनां ज वार्गान সাজাইবার যোগ্য চিরস্থায়ী ফুলের বিচ যখন যাহ। রোপণ করিতে হয় পাওয়া যায়। ইহাদের নিমিত धोहक इहेट अदल वार्थिक 18 छ।का अधिय मिटि इया

अथोदन ४० तकः त जादित कलग शां अया योश। देशापित गाथा ज्यानक खंलदे छेश्करो छ व्यक्ति महालत्दे क्रब्छ्ड। जाङ्गा — न स्व। वृश् ।

> जीन्जा भागान हरिष्धाश शाईकशाए।, नर्भाह, क लकाज।

वांगि इंश्लु इइंटि मग्छ (शंगि अभाभ खेयथ व्यानाइয়ाছि। ডাইলউসন ইত্যাদি व्यामात अश्रु श्रु श्रु इहेर्व। निम्न निष्ठ श्रुक उ जनग्ना खेराय धार्यात्न शाख्या यात्र।

আমার প্রণীত

হোমিতপ্যাথি চিকিৎসা বিজ্ঞান याग्न छा क्यां छल अग थए, अग मश्था। 3100 २ য় म १ थ ग 310 হোমিওপ্যাথি ভৈষজ্বভাত্ত ১ম সংখ্যা 30/0 जर्भादतादगत गदशेयश 3110

রোগীরা অপিন আপন লক্ষণ পাঠা ইবেন **ढोकदबादगंत गदहोब**

(इर्गि अशार्गिक (मिष्ठिमन (उछ उलाउँठात २० लिल वांका ३० 30 শিল্প বাক্স

७३ वांका এक थानि श्रुङ्क थांकिरव यांशा दांता এই किर्मि द्याधि उ ইহার নামা প্রকার পরিবর্তীত भी शांत हिकिৎमा वां छ महः क करा यां हेर् । हेर्। बिडाख मतल डायाय लिथि।

> विविश्वित्रांल खोठ्र छ ७९ नः कर्जअशिलमधी है।

लर्ज लिछ (नत ছिव।

ञ्डन गवनंत (জनारवल्लत ज्रांड उंक्से लिएथा-গ্রাফ ছবি আমার নিকট বিক্রয়ার্থে প্রস্তুত আছে यूला / ा

२०७७, जिङ्गूत (ताफ कलिकाङा।

छी वर्गतिका नरथ तारा।

(एक जुत ७ ए। लात मार्च। (एम् जुत (त्रमा ভাবে) ना । वर्ष त्रि न इडेश्राह्य। अडेश्रुक छा ङात गार्ट्य पछि अन्।-श्रामि, शना शमा ছल्म ति इहेशाছ। भूम।० চারি তানা, এক ট কার অ शिक लहेल of ছুই আন। क तिया शार्या इहेरव । कलिका जा, शतानहां हो, दुन्न-वन वमारकत लिन २नः छवःन वातू काली छः १ शास्त्र निकरे वथा िस लिथि उ स्टान थो थेरा।

> শ্রীনব কুমার নাথ (घाश यदभा इत।

यूद्रक विद्नामिनी नाष्ठेक। मूला > होका डाकमाछल %।

কলি চাভায় প্রকাশকের বাটিভে (১৭। ১৮নং यलका (लन, वल्वांजांत) এवः প্রধান প্রধান সকল शुखकालाय शिख्या।

भारत महिला जिनी दिष्य मगढि मगि भक मगान नां कि कि तिया हि। आगता छोन हिन (निंश्ट भाई-তেছि, सूर्विक विमिनिन एडि, थिक मग्रांन लाड कतिरव। * *। अधिक कथ कि, अथानित शार्ष काल शारिकः जाजा अ मजी रहेश डिरिव। --- (मांग প্रकाश।

य शिक्षा धरे क्रिश शं क्रमा कर्त्न, उँ। शंक्रा (मटकांत প্রমোপকারী এবং যাহার। (मकाहिटेज्यो डीशामित मकल्लत धहेन्नश धांचक डीक छे भार প্রদান করা উভিত।—— অমৃত বাজার পাত্রকা।

सूरहल्म विद्यानिनीत त्र हिंछ। आगि पिट्यत

मलाशिबौ नाउक। (कान ভদ্র মহিলা কৃত।

शुला ५ धक होका एक माखन ४० जाना ৩৫ नम्रत वांश वांडांत छींहे, क्लांन मीशिका পুস্তকালয়ে, ১১৮ নশ্বর অপর চিতপুর রোড दिवलक नाथ (मत पांकारन धवः काम वाकात खिशो (माइन मट्डिन लिन) नर जगरन जामा निकहे थाश्वा।

व्यानम लाल गटकाथाधा

वावमांशी। क्रिंच, निगा ७ वाणिका विश्वयक মাগিক পত্র।

इंश्लुख इंहेटड প্রত্যাগত জীযুক্ত জীনাথ দত कर्कुक लम्लामिङ इहेर्व। छ का नर्गाल ऋ ल्लित। প্রধান শিক্ষক তীয়ুক্ত দীননাথ দেন প্রভৃতি, উশরি

लि थे जिय्य मकत्न मिदिर्भिय जिं छ जित्न वार्जि ইशांख निश्यान। " इलियान विधिकान विधिकान तिष्ठे" उ "छोडिछिकाल विश्वादि रित्र " (य मकल मका न आहि, ''व वना ी जिंश जाशा मुख इहेरव। अविद्व এ দেশীয় বাণিজা, क्रांच भिःश्वांवयग्रक मश्वाम उ আছার উন্ন ভর উপায় িশেষরূপে বিবৃত হইবে। थोंका मश्था अञ्चान शैंफ ना के ति आंगांक छः রয়েল ৮ খেজী ।ত। ফর্ম। আকারে প্রকাশিত इइट्या अधिय वार्षिक गुला २ दूई छोका। यक-यहल ए क गांद्रल । । ।

পতিকা গ্রহণাকাপ্তী মহাশ য়রা সম্পাদকের निकंछ, कलिकां छ', 'ए ब' कटले छ । स्वार्य । यह किका-नाश शब लिथितः न।

> लाल वर्धात भिख धर्द (कार (श्रि अभाशिक हिक्टिमक।

(लिय्यानम्ह (तन अस्य नित्र किंग मण्डिय) शार्श उलाउंगात वाका मर्गड शुक्र र्विक ९ मक पिराञ ए । छ । त সমেত गट् र जान मज्ञकादनन

क्रिविन क्राम्भव

ध्यादन जानागा मकल श्रकांत छे दक्ष ज्ञाश (इंगि ७ तिशक छेयध ७ वाका मार् यूटला खाछ इउ या या इतक ।

यकः दलत यूना शाशि

त्राजा इर्गा नाताश्र ताश कूछ्य है।, वर्त्रामशूत	30
वाव क्याम क्ष ध्य य वक्ष भाग	30
' मीरनन्द नाथ मान्नाल हेलाभाष् भावना	
' भाग गाँग मज छ्शनी	CIIO.
'রাজ চন্দ্রণয় বেনারস	6
E. J. Glazier Esqr. Rungpore	Rs. 15
दर्भालवी लाल मामून थाँ, मशमाशूत	.59
वात ज्ञावक मान्नाल क्यकाबान	0
' इति किट्मोत त्राय धनाइ।वाम	50
' জीवन ऋख घाष अभ नश्त	0110
' কেদার নাথ সাহা রুম্ভনগার	7.3
'বেনী মাধন দত্ত মলহারপুর	0110
' बर्जन्म कुमात मूर्थाथः धारा मधुशुत	50
'বনমালী সেন ঢাকা	. :0
' জন্ম জয় হালদার হরিপুর, রাজদাহী	. 50
' গোপাল লাল সরকার বরিশান	0110
' जानकीनाथ मू अभिषाम माध्य	20
' अज़िश ठ ज़ माम वांश (मांशांन ज़श्शूत	50
' রাস বেহারী সিং দিশজপুর সিরসী	339
' ब्रिकिलान तस्य गार्थं, खोतामश्रत	6
' আবহুলমজিদ চৌধুরী, বাধরগঞ্জ সাং উল	निशा छ
র্ণ নিলম্বর দাঁডিায়ান, ভাজতড়	
' চञ्जका ख भाष्य नि, छ।क।	50
' নবীনচন্দ্র মিত্র, গায়া	30
' মতিলাল দে, রাজ্ণ	C

माल ग्रम वस्त्रवं, मश्रमावाम वङ्ग्रमशूत

(भाविन्मनात्राश्व त्राश्च (र्श्वती, त्रश्चत

लवक्षणाल माम, द्राष्ट्र मारे निन मार्गद

व्रक्त विश्व विष्णा भाषा, व्रक्षिमहल

त्राज्ञक्ष भिः, (मिरोत्राज्ञश्रुतः, नर्क्यान

माउकोता लाइ द्वाी माउकोता

उमानाथ (मन, जल ला रेखड़ी

50.

:24/0

clo

ञ्यम् ज वां जां व शिं जि का।

अन ३२४७ माल २३१ देवणांथ । वृज्ञां जिवात

ध्टा व्या व्या।

यथन मुमामानितियां इ उ इ इ इ उ अ एम म इ १ ता ज-मिर्गा इरिष्ठ পण्डिङ इहेल, उथन আधार्मित आनर्मत वात मीया ছिन ना। यथन कालानि वाश्वत्त इष्ठ इहेट जात्र जवर्ष महातानीत नामनाधीन जाहेल उथन मम्य ভারতবর্ষ আনদ ধনিতে পরিপৃর্ ইইল। चानात महातानी "এस्थिम चन हे छित्रा" डेलाधि ग्रहन श्रीक शिष्टि एक स्थितिया वासारित वासारित वासारित वासारित वासा नाई। डेंक्ड शीषाकास वाशीरात जीवन अहिं।-পদ इहेटल जाहात भारी ति (य कान পরিবর্তন উপস্থিত इश, वञ्च, वाञ्चवर्गश (अङ् वर्णाङः (य मञ्जू स अञ्चल्य वर्ष विलिया घटन करत्न। ভারতবর্তের (एक भ जावन्त्र), णशास्त्र अथन (य (कान शतिवर्जन ऐगिइड इहेट्ल वायादित वाणा इस এই वात वृति। वायादित युः १थत व्यवमान इहेन। इंडे(त्राभीत नडाडा (ज्ञार्गिङ प्राता याशादित मिन्कि आदिक आदिना कि इत ना है, अथवा याशाता ভারতবর্ধকে অস্বাভাবিক ভাবে শ্লেহ করেন, তাহা-प्तितं विश्वाम (य यूमनयान ता क्राइत शतिवार्ड देशता क জাতি রাজ সিংহাসন আরোহণ করায় দেশের মঙ্গল रश नाई। युमनयानामत (भव अवस्था कार्याङः हिन्द्र। ছिল তাহা এত দিনে धृश्ण হইয়। যাইত এবং এত দিন शिनुजाि यदिनभीय ताजात अधीत आवात वाम कतिछ। ইংরাজেরা এ দেশ অধিকার করিয়া ভারতবর্ষের যে অশেষ বিধ মঙ্গল করিয়াছেন তাহা তাহারা লক্য करतन ना। लर्ज म'लिमवित्र মত এই (य, यङ দिन गारिक्ष-खेत वरञ्जत छल्क ना छे ठेशा या है (डएक, यड मिन जातड-वर्षत वज वावमात याथीन ভাবে ना চलिएडएइ, उठ पिन अप्तर्भात नव श्रक्षा हिंड वज्र वावम'य (कान क्रथ श्रक्ष्ड शिथीन ना इहेटल एए लात श्रक्त छेन्न छि इग्न ना। श्राधीन চবস্থায় শুদ্ধ দেশের সুখ সম্পত্তি অপরের ইচ্ছার ह्रीत निर्ভत करत ना, श्रदाशीन तार्जात जानका ज-প্রভাবিক, অস্থাভাবিক অবস্থায় কোন কালে স্থাভাবিক डेमडि इइेट शास्त ना। शृथिनीत कान एम धई অবস্থায় কোন রূপ প্রকৃত উন্নতি লাভ করিতে পারে भ थं, ভারতবর্ধ কখনও পারিবে না। ভারতবর্ষ र्थक्षिशीन, जारान साथीन; ভারতবর্ষ मভ্যতম ইংরাজ জাতির অধীনে স্থাশিকত হইতেছে, জাপান অসভ্য (मण; उथां जाशान जाश्वरिंग डेन्नि कित्रिंडिक्, এবং ভারতবর্ষ প্রকৃত উন্নতি কি অবনতি করিতেছে দে বিষয়ে এখনও অনে কের সন্দেহ আছে। আবার কো-म्भानि वांश्वाद्यतं रुख रहेए यश्तानी ভात्र वर्ष श्रीय श्रुष यानयन क्याय याश्या शृह्य शूलिक इन, छाङ्गता अथन পদে পদে তাङ्गित जुग দर्শन करिएड-हिंग। यथन (काम्लानि अप्तर्भ ताजा कतिर्जन, इंश्निम भवर्गस्थित महम जात्र ज्यात ज्यान रूथ विद्यां देनक छै। जम्मकं छिल ना। उथन श्र्व कालीय जिप्निमित्रात (य शूक्ष एवत कथा जाग्यता श्रानिए भारे, भवर्गायनेत मिरे श्रूकवन्न छिन। जर्भ लालका चात्रा श्वर्गरम्भेटक सार्थभ्र क्रियाछित ना, আমাদের (त्रामत्न कि इः रथत ज्यक्ष मर्गत्न श्वर्गत्म ज्यान विधित कि आक्त इहेटजन ना। उथन जात्र उपरिक

उँ। होता वार्यनामिशक शीतवात्रि शत्न कतिएक। তাহারা রাত্রি দিন সশক্ষিত হইতেন পাছে কোন বিবিয়ে তাহাদেরষশ কল প্লিত হয়, তাহারা এই নিমিত মনোযোগ পূর্মক কোম্পানির কার্যা সমুনয় পর্যাবেক্ষণ করিতেন, शालिशारमण्डेत मडा याद्व यत्नार्याम शृक्षक (का-म्यानित मानन कार्या প्रतीका क्रिडिंग, उथन ভाরত-वर्ष ममद्य (कान कथा छे शिष्ठ इं हे दिन शानित्या रार्य मलामिल উপेडिङ इइड मा এवर भवर्गिया है त शकी यमल প্রবল হইয়া ভারত্তধ্র হিতাকাদ্ধী সভাগণকে পরাস্ত मबन्नीय (कान छर्क डेशिश्ड इहेल माडाता वित क इहेश शृह् প্রত্যাগমন করিতেন না। এই নিমিত্ত य पिछ जथन जात्र वर्ष इहेट इंश्लिख भर्यास (विलिखाक ছिल ना, यनिछ उथन ভারতবর্ষ হইতে ইংলও গমন क्ति जि जि निर्विकाल लागिक, यिष्ठि जात्व व्यविगिता অপেক্ষাকৃত তাশিক্ষিত ছিলেন, এবং এখনকার স্থায় অনেক বিষয়ে তখন এ দেশে তত উন্নতি হইয়াছিল না, তথাচ ভারতবর্বে কোন গুরুত্র অত্যাচ্র হইলে उथनई পालि য়ात्यत्छे यहा शाल याश छे পश्चि इइ । উপস্থিত হইল ও অহা হা অহা চার লইয়া কত রয়াল किंगिन विमित्र। छिन। देशनिन भवर्गराने (य डेक्टिनिकात गर्क करतन जाश (काम्भानित मामनकारन अपिर्ण প্রবর্ত্তিত হয়, যে সম্বাদ পত্রের স্বাধীনতা লইয়া গৌরব कर्त्तन (मङ (मरे मगर्यतः ; आहेन आमाज्ञ मगुम्यरे কোম্পানির সময় হয়। তখন উক্তশিক্ষা তাহার। ञका ज्दत श्राम कति: जन, अथन (यक्ष भ भवन (यन উচ্চশিক্ষার প্রতি পদে পদে প্রতিবন্ধক জন্মাইতেছেন তখন তাহা ছিল না, অপিচ স্থশিক্ষিত যুবকদিগকে लहेशा (काम्लानि वाहाइत शीत्रव कतिएन। जाहा-मिगरिक काल्बिक इहेर बलहेशा छेक्र श्रम मगुम्श श्रमान করিতেন। তাহারা সমাদ পত্রের যে স্বাধীনতা প্রদান করেন, এখন তাহাই লইয়া গ্বর্থেন্ট টানাটানি क्ति एक । ज्थन छी एक नार्ट्य त्र प्र विधि जाईन ছিল না, তখন রোড সেস ছিল না, তখন সিডিশন वाइन ्छिल ना, उथन (জलের कर्ठाরडा ছिल ना, इंश्तारक्त मर्क अर्फिशोश्राप्त देवत्वाव हिन ना। षात्रकानाथ ठाकूदतत (वनगाण्यात वागात गिया वार्याम वाञ्लाम कतिए ग्रानंत (जनाएम वाञ्राम বোধ করিতেন না। শোভাবাজারের রাজবাতীতে নিমিত্ত অত্যাশা করিলাম, কিন্তু তিনি কয়েক বারই রাজপুক্ষেরা আলিয়া ছূর্গো॰সব দেখিতেন। ইংরা- এখানে নিরব হইলেন। জেরা বিপদাপন इहेल এদেশীয়দের আতায় লইতেন, व्यानात अपनिशिता देश्ताकिषिशिक कर्जात गात जिल করিতেন। দেকালের কত ইংরাজের চিত্র এখনও ध एम भी शिष रिगंत रेवर्रक थाना श (भांडा भांडेर छ धवः রাজা রামমোহন রায়, দ্বারিকানাথ ঠাতুর প্রভৃতি বোধ হয় এ সঙ্গে হইবে। গ্রন্থেন্ট বোধ হয় এত এ দেশীয়দিপের প্রতিমূর্ত্তি কত ইংরাজ আদরপূর্বক দিন পরে বুঝিতে পারিবেন যে, এদেশীয়েরা কোট निक देवर्रकथानांश तका कित्रिका। उथन यमि लर्ड (या वाधभूरतत ताजा क जभयान कतिएवन खाङा इहेटल शालि शारमानेत मर जाता जाहात मृड (पहरक अ क्यां क्रिएन ना। व्यमात गाई का या जा व्यक्ति পদ্চাত করিতেন তাহা হইলে লড নথ্জকেরও এদেশ इहेट किम्शिंड कलावत इहेश यह एक भगन कित्रिंड इइंड।

সম্প্রতি ভারতবর্ষের তাবস্থার আর একটা পরি-वर्जन इहेट ठिलिल। यहातानी "এম্পেস ज्व हे खिया" डेशाधि श्रञ्भ कतिएडएइन। विक्रेतिशा " कूर्न" মুসলমানদিগের ঘোর অত্যাচার হইতে উদ্ধার করা উপাধি গ্রহণ ককন আর " এস্থোদ "উপাধি গ্রহণ भवर्गरान्छे अक्षान कर्ज्वा कर्मा गतन कतिए जन, इंश्लिका किकन, अपनिभीय्रामिर्गत निकछे जिनि शूर्विछ (यक्तश গবর্ণ মেন্টের তখন অহঙ্কার ছিল যে তাঁহারা সাধু এবং ভক্তিও শ্রদার পাত্রী ছিলেন, এখনও তাহাই থাকি-বীর, তাঁহারা ছঃখীর ছঃখ মোচন করিতেন। বিপদা- বেন। তবে ইংলণ্ডের ইংরাজেরা আমাদিগকৈ কিছু প্রাকে বিপদ হইতে উদ্ধার করিতেন। ভারতবর্ষেয় স্থায় ভয় দেখাইয়া নিয়াছেন। আমরা মহারাণীকে কখনই ত্তি রহং দেশ এবং হিন্দু জাতির ভায় একটা মহৎ চক্ষে দেখি নাই, স্থতরাং তাঁহার শরীরকে আমরা জাতিকৈ উদ্ধার করিৰার নিমিত্ত ঈশ্বর উহাদিগকে ভক্তি কি পূজা করি নাই।যে ইংরাজ শাসনে এদেশের তাহাদের হত্তে অর্পণ করিয়াছেন, এই রূপ ভাবিয়া এত মঙ্গল হইয়াছে, তিনি সেই শাসনের কত্রী। আমা-

দের এই শাসন প্রণালীর নিমিত্ত ভাঁহার প্রতিভত্তি उ व्यक्ता। यिषि " अस्थिम जाव देखिया" जेभाधि श्राह्म क्तिल डाँश्त भागन প्रभानीत অবন্তি হয়, তাহ। रहेटल डाँहात এই উপाधि शहन कतिया काज नाई, जिनि (य "कूरेन" ছिल्लन जारारे थाकून। आगरा শুনিয়াছি এ উপাধি গ্রাহণের সঙ্গে তাঁহার শাসন कर्छात इहेरन, ञानुडः हेश्तार्कता अहे स्या डाँशारक "এস্প্রেস অব ইংলগু" উপাধি গ্রহণ করিতে দিলেন ना। (य डे नाधित नाम छनिया इंट्ता छन्ता छी उ इई-করিতেন না, অথবা পালি য়ামেন্টে ভারতবর্ষ লেন, তিনি দেই উপাধি প্রহণ করিয়া কি আমাদের मजल कि दिवन ? आगता है शाज अपिका छाहात অধিক আত্মীয় नहे, অতএব তাঁহার যে অবতার ইং-রাজেরা দেখিতে সশক্ষিতহন, আমাদের নিকট কি সে অবতার ক্ষেহপূর্ণ হইবে? রাজমন্ত্রি ডিসরেলি আমা-দিগকে আরও ভয় দেখাইয়া দিয়াছেন। তিনি বক্ত তা कारल विशक्त पलाक इंशाई विलिशा व्यान (य, शश्रानी-'এম্পেন' উপাধি প্রাহণ করেন এই নিমিত্ত ভারতবর্ষ, বাদীরা মহা বাত্ত হইয়াছেন। কিন্তু আমরাত ইহারকিছু जानि ना। अपनिश्वा इंश्निम गवर्गयान्त्रेत नियिख यश्तां भीति ভिक्ति करत्व। यक जिन स्मान्यन इहर्ष उठ मिन जिनि याश विलियाई आश्रेनारिक श्रतिहय मिर्वन, वागता जाशाउँ जांशांक जिंक कित्र। यि वि পরিবর্তের সঙ্গে ভারতবর্ষের শাসনের পরিবর্ত না হয়, जाहा इहेल " कूहेन" छेशाधि शतिजाभा कतिया " এস্পেদ" উপাধি গ্রহণ করিলে যে আমরা এখন অপেকা ভাঁহাকে অধিক ভক্তি করিব দে মিছে কথা। यिष "এত্थिन" উপাধি গ্রহণ করিয়া তিনি ভারতবর্ষের প্রতি অধিক নিঃ দ্বার্থ স্লেহ দেখান, তাহা হইলে তাহার এই উপাধি গ্রহণ করিলে ভারতবর্ষবাসীরা আনকে नृष्ठा कतिरव, किन्छ ডिम রেলি माह्य ७ व क छ। काल विलितन ना (य, जाँशत वह डेशाधि अहरनत महन এদেশের কি মঙ্গল হইবে। তিনি বিপক্ষণিগকে नित्रव क्तिएं शिशा वलन (य, महातानी এই উপাধি श्रद्ध करत्न এই निमित्र जांत्र उपर्वामीता वास इह-शांट्य अवर देशांट जाशांदित विखत मझल इहेरव, किन्छ এই পर्यास विलिया हुशं कर्तन, कि मझल इहरव जाहा णांत विलालन नां। वक्ष्ण काल कर्यक वात जिनि वत्नम (य, इशाइ जात्रजवर्षवामी फिरगत विखत मझन হইবে এবং আমরা প্রতি বার কি মঙ্গল হইবে শুনিবার

इर्डिक उ दका है व्यव उग्ना है।

বেহারের ছর্ভিক্ষের প্রকৃত কারণ বোধ হয় এত দিন পরে প্রকাশিত হইল। আর একটি উপকারও ञाव उशार्द्धत कार्या व्यभाजीत देशत (कन व्यथ्य वित्रक इहेट उट इन। शंड वरमत यथन (वहाद आवात इंडिक উপস্থিত इहेर्न ६ हे क्रिय आभाक्षांत छेम् स इस, उथन (११-ভিদ সাহেব এই ছুর্ভিক্ষের কারণ অনুসন্ধান করিতে গমন করেন। তিনি অভ্নস্কান করিয়া গ্রন্মেন্টে वक्षी तित्थाउँ (थात्र कित्राष्ट्र । वह तित्थाउँ ग्वर्गराने थकान कर्त्रन नाई, क्रुड्याः इश्टि जिनि कि लिथिशाष्ट्रम, जाहा जामााशि किह व्यवशं इहेर्ड शांद्रम नाई। इंश्लिमगांदम এई तिर्शार्टित किश-मःश्रां थाकाशिं इर्शाट्य। आगता र्शतं माताःश वशाल थकान कतिलाय।

शिष्मि माद्य निश्याद्य एव, म्युडाञ्चा छेथ-श्रिङ इहेश। ङाहात (वाध इहेल (य डिनि (यन (कान জনশূন্য স্থানে উপস্থিত হইয়াছেক। রাস্তা ঘাট মাট य मिरक जिनि मृश्विभाज कतिलान, कान साल यञ्चात यञ्चात -िङ्क डाङात नयम शांठत इहेल ना। এই साथ डानगुना क्व मयुषय পরিত্যাগ করিয়াছে ও কেনই বা উর্জরা

পতिত ভূমি সমুদ্র আবাদ করে নাই ইহার কারণ অবগত হইবার নিমিত তাঁহার নিতাত্ত কৌ তুক হইন, किन्छ এর १ (लाक पिथिएलन ना याश्र निक्छे जिन এই বিবরের অভ্সদান। কেনে। যে সমুদয় লোকের अएक छाङ्गत माकाः इहेन छाङ्दित छा द (परिश्रा (वाथ इडेन (य, जाशाता जागक ह इर्डिक्तित निमिज जज वार्क्त इश नाई, या जामन विभन कईक इज वृक्ति इहे-त्राष्ट्र। তाश्ता वृर्डिक वि वान नित्त कथा करित महा, किन्छ জिমাদারের। তাহাদের (को १ लोगवन ও निष्णो एन क (त्रन (म मशुम्य कथा किहर्ड किहर्ड डाहा एन त शूथ इंडेट इंडिक उ जनमन वहे इंडे जि वाका वहिशंड হয়।" গোডিস সাহেব দরভাঙ্গা বাজার জমিদারির कार्या প्रभाजी मयरक्ष এই क्र न लिथियार्हिन। " দ्वजाञा রাজার ৫০টা পরগণা আছে। ত্রিহুত, দরভাঙ্গা, ভাগ-लপूत, मुक्त, शूर्विशा প্রভৃতি পাঁচটী জেলায় এই কয়ে-कती পরগণা। তবে ইহার অধিকাংশ পরগণা তিহত ও দরভাঙ্গায়। এই সম্পতিটী ১৮৬० খ ; অবেদ काई वन उशार्ड त वभीत तिक्र इश। ताक्य मः शास्त्र निमा जिमातित माधा (कान का करें नाई, অথচ ইহার নিমিত্ত প্রজার উপর অতিশয় নিজ্পীড়ন হয়। তিত্ত, দরভাঙ্গা, এবং মুঙ্গেরে রাজার জমিদারি इश्रा इच्छायङ ताङाक कर इकि मिया देजाता अर्ग हेशाउँ मर्वव कत त्रिक्त रश। २४७० थः जाप ताकात জিমিদারির রাজস্ব ১৬ লক্ষ টাকা সংগ্রহ হইত, এখন जाराई २० लक छोका इक्ति रहेशाएए। हेशत २४ लक छोका প্रজात निक्छ वक्या वाँकि तश्या ए। नाता-দিগর নামক একটা পরগণা এক জন কুঠিয়াল সাহেব इजाता लहेशाष्ट्रन। अहे मार्ट्रितत मद्भ अहे क्रि वन्तव उप, जिनि यज छोको कत मः श्रञ् कति दिन मार्श्य সেই টাকার প্রতি শত কর। ১০ টাক। কমিশন পাই-(यन এवर এই क्रिम्नित्र निमिष्ड এই প্রগ্ণার নিক্ট-वर्ते द्यात्व अजाता धि इात् कत अनान कत्त, এখানকার প্রজারা তাহা অপেকা দ্বিওণ কি তিন গুণ शात कत (मग्र। এই मन्शि जित कार्या निकारित ভात এक জন सूमक देश्वाद्ध न्य श्रिक्त श्रुष्ठ भ्यर्ग वर्षण वर्षण कित-য়'(ছন এবং ভাততঃ ইহা অনায়াদে আশা করা याईट भारत (य, প্रজात প্রতি কোন রূপ নিপ্ররাচরণ माता इनि এই অভিরিক্ত কর সংগ্রহ করিবেন না, কিন্ত কোন প্রামের প্রজারা কর দিতে অসমর্থ হইলে ইনি কি হয়। প্রথম রিজোলিউদন প্রস্তাবিত হইলে বারিফার करतन ? শোরার কি লাঠিয়াল পাঠাইয়া তাহাদের थाना इष्टमन करिया जानयन करतन। এই मयुमय অত্যাতার স্থ্করিতে না পারিয়া এদেশ ছাড়িয়া প্রজার। পলায়ন করিতেছে এবং ইহার নিমিত্ত এত लाक (मन जागी इरेड आतं कतियाह । ১৮৭৫ शः जारकं गवर्गरान्छे भानित्भत প্রতি আজা প্রকাশ करतन (य, পোলिम এই পলাতক প্রজাদের একটি जालिका রास्थित।

शिष्मि मार्थि विलिडिए । (य, (वश्दा এक्रथ घन घन छूर्जिक रश, जारात कात्र जनाइ है नर्ट, খাদ্যের অপ্রতুলত। নহে, কেবল প্রজার দরিদ্রতা। তিনি বলিতেছেন, জমিদার ও ইজারদারের। প্রজা-मिरिशंत मर्विषां छ कर्तन, এই निभिज् (मश्रात এই क्रथ यश्वता छेशश्वि इয়। ১৮৭১ খঃ অবেদ বেছারে যখন তুর্ভিক্ষ উপস্থিত হয় তখন আমরা ইহার অবস্থা একারণ প্রেরণ করি। গোডিস সাহেব যাহা লিখিয়াছেন আমা-(দর সমাদদাতা অবিকল তাহাই লিখেন। তবে তিনি व्यात वक्षी कथा लिएथन। वाँशत मण्ड वहे इर्डिक्त मर्ख প্রধান কারণ নীল তু ঠর অত্যাচার। দরভাজার थात्र थि । अह अक अक अक जी नीलकू है। अह कुर्ठिशालियां थांश देजांत्रमात्। देशां छक छक कदत দরভাঙ্গা छिটের মা নজারের নিকট হইতে জমিদারি इजारा नर्याः विजन धजात निक्छे मर्थार्

करतम मा, धावात इंशत छे भत मीलकू ठेत जमश्था वाश इन्ति निगिन थङा निराद थि नान। क्रो ञ्जानात करत्न। এই অजानात उ डेक कत (वश्-(तत मग्रम प्रशिष्ठत का न। (शिष्ठिम मार्थि मील-कू ठेशानगर्भत वाजानात्वत विषय जाशत तिर्भार्ष लिখिशा ছেন कि ना छ ह। আ । जान का नि न ि जिन यथन দর জাঙ্গা (छ টের ম্যানে রর বর্গ সাংহেবকে ছাড়িয় কথা কহেন নাই, তখন যে তিনি কু ঠিয়ালগণের অত্যা-ठातित विवय किছू लिएथन नाई ठाइ। আমাদের বোধ र्य ना। मात जर्ज क्या प्रिन यथन प्रत ज्ञा (के वे प्रिथिट গমন করেন, তখন তিনি এই ইজারদারদিগের অত্যা-চারের কথা শ্রবণ করেন। তিনি এই অত্যাচার निवात्र कित्रवात निमिछ (यत्म कत्र के कात्र। व्यनानी छेठ। इत्रा (न छ यात निर्मिख थ छ। व क द्रिन, किन्छ कू ठे-शाल मार्ट्यता जाशांक धतिशा পড़िन এवर जिनि कू ठेशानि पिता स्वार्थित नियिख प्रतिष धानि पित অত্যাচার বিশ্বত হন।

मात तिष्ठार्ड (ऐम्लान यर्ड किर्वि अव उर्शार्ड त ञ्थाि किकन, এवर जिनि यज हेन्छ। लिथून, এ व्यवालीत क्विमाधार्वहः क्यामात्राव क्विमां क्या-खरे, किंख (गण्डिम मार्ट्यंत दिए भाउँ भार्र कित्रा। সমৃদয় ইজার্দারদিগকে বিলি করিয়া দেওয়া হয়। বোধ হয় তাঁহার সেভুম যাইবে। দরভাঙ্গার রাজা (वाध इय जात इरे वध्मत शा वयः आश्र इरेवन। जिनि वयः थाथ रहेव। জियमादित कार्या जात रुख लहेवा कि (मिथिदनन? इंशाई (मिथिदनन (य, अर्थना य द्वारा जांशांत ताक रकां व मृना इहे तार्छ, किया ति প্रका मृना इहे तार्छ এবং যাহারা আছে তাহারা ঋণ জালে আবদ্ধ এবং অনশনে প্রাণ ত্যাগ করিতেছে। যে জমিদারের সম্পতির উপর কিছু মমতা আছে । যিনি উত্তরাধিকারীর সুখ ছঃ-খের নিমিত্ত ক্ষণকালের তরে চিন্তা করেন, তিনিই কোর্ট তাৰ ভয়াডে র এই রূপ কার্য্য প্রণালী দেখিয়া সশক্ষিত श्रेरिन।

> वांचारमंत्र (मट्नं अक्डी क्था वांट् (य, धः मंत्र कल वाञ्यान नः । ऐश काश्रव ठालना क्रिए श्र न।। লর্ড নর্থক্তকের স্মারণার্থ একটি চিহ্ন স্থাপন এবং ভাঁহার প্রতি ক্লভ্রতা প্রকাশের নিমিত্ত গাত শনি-বারে কলিকাভার সেরিফ একটী সভা আহ্বান করেন म जा श था श जिन न ज त्यांक छे । जिं ज इन। मङोद्र कार्या जार इ इ इ दल अक की शाल (या ग छे शाल छ ज वार्य मञ्चय म छ के छे हा जश्राणाधन कर्त्रिवाद ज छ-व्याश व्यकाण करवन, किन्छ मजाञ्च ल्लाक जाँचारक कथा कि इटिं (मन न।। जिनि कि मश्रमिन के ति जि यान जारा जारत जानिना, किन्छ रिन्मू (शिष्ठे रिन्मू-তেছেন যে, তিনি নাকি লর্ড নর্থবাকের শাসন সম্বান্ধ प्रशां जिना कि बिशा जाँशा जाँशिक धितकात कि तित्व धई উপ্লেশে রিজোলিউসনটার সংশোধন করিবার মনস্থ कदत्रन। किन्तू (शिष्ठि यह कि कार्। यश्रथ वावुत यरन्त कथा जनगं छ इहेलन जाहा जामता जानिना। (नाध इंग्न जिनि मत्न मत्न विश्वाम कर्त्रम (य श्वर्ग (क्षमार्वन প্রজাদগের প্রিয় নন। ভাষার এরপ বিশ্বাস করি-বার অনেক কারণ আছে। তিনি এক বার লর্ড নর্থ-ब (क व शक मगर्थन क बिट्ड शिवा वित्यव क जिश्र হন। বোধ হয় এই নিমিত্ত তাঁহার বিশ্বাস যে, মন্মথ वाबुत ऐएमगा ছिल लर्ड नर्थड करक जित्रकात कता। यश्र वावुत (य छिन्नना थाकूक, किन्छ किन्नू (भाने ग्र छित्र निवृ । क्र छ। त निमिछ लर्ड नर्थ बु क्र व जिन हे इहेश एड़ । हिन्दू (भोष्टे यदि अकाम मा कविराजन या लर्ड नर्थ-ब करक मचाथ वांचू जिल्लात कहिए प्रधानमान इन, जारा रहेल यादाता ए (मर्भंत श्रक्त जात्या जात्राज नन, তাহারা অন্তঃ বিশ্বাস করিতেন যে লর্ড নর্থ-ब्रकांक ভারতবর্ষণাদীর। অতাত্ত ভক্তি ও জীতি कतिजा। दिन्तु পिটि शहे धहे विश्वादमत नाथां जन्यां देश किटलन। विन्नु (शाँडेश डे यान यान द्या वर किट्ड

भारत्न (य, यन् यथ वायू (यत्न न न न न व्यं करक जित-क्षांद्र करिंद्रिक डेव्यान कर्त्रन, व्याद्र मञाञ्च (लारकद्र) ভাগতি ভেমনি অপমান করেন, কিন্তু লড নর্থবুকের শাত্র ররণ তাহ। মনে করিবেন না। তাঁহারণ মনে করি-(तन (य, लर्फ नर्शव क जावनार्य व्यक्तिम व्यक्ति हिल्लन, नथ्वां (लक्टिटनिके श्वर्गत्र (य मज्भव मज।-পতি দেসভায় গ্ৰণ্র জেনারেলকে তিরস্কার করে कार्षत अक्षा माधा रहेड मा।

मात्र तिष्ठ ७ टिप्भन कलिकां जात्र अकी किवास्य ञ्राशन कतिवात मङ्गाश करतन। १३ अरक्षन जातिरथ वह हिन्। नश्हिं मश्कृ शिंक इहेग्राट्य। यथन वहे हिन्। লয়টি স্থাপিত হয়,তখন কলিকাতার মনেক সম্ভান্ত লোক (मथार्व छेशश्रिक हिल्लन। এই অনুষ্ঠান छेशलरक टलक है न है न व व व व श्वर्ग व किया दिन है न वक् जा करत्रम। अपि मण्य नात्र तिहार्ड व वि। अरे চিত্রালযের দারা কি কি উপকার হইবে এবং ইহা किता श खूला डिंड इहेर डाहा व मिति विन कर्यन। मात दिहाई (हेन्स्रान वरलन, "यथन : ५१८ थृं गाय (ठी बक्षी एक निष्ण कार्या व राज्य निर्मान इय, कथन लर्ड नथे उकक रतल न (य. एएम. न जकिन विकास स् लिंड इन्टल जान रहा। जागता अरे निमित्र करम करम जार्हे कू लंब मध्खः व वह विद्यालय ही काशन करिए छ दिना भी इइ।" ভিন ভংগর ক্রমে কি কি উপায়ে এই চিত্র-विकालाडी स्माडिंड कित्रिय जारा दर्ग कर्तन। ि न वटलन (य, इंश्लिएब नाभारनम शामाति अहे जभी जाएला जाला जारस इरा नामान्यन गानि (त्र) शवर्गिषे जिं जिल्ला माद्या करद्रन। अहे शोलादि अर्था९ চিত্র লয়ের অধিকাংশ উন্নতির ভার ভেথাকার অধিবাদীর। বছন করেন। যে চিত্রালয়টী স্থাপিত इइट उट्ह इश्व वि: लेख भी जागा अहे या, मात दिहाएं हिल्लाल उन्नावधान देशा अजिका इदेख्ड । जिनि निष्म निष्म दिनाश वित्निष सुनका।

क निका । भिष्ठे निर्मिणान आहेरन श्वर्गत एकना त्रन मन्। जिमान कित्रिशाष्ट्रन। एऐ जम जात्मामिर्शिनन এवर खिष्ठे में देखियान जारमामित्यमन दिकल शेवर्गमधे कर्जुक ञाপদभ् इहेशा कान्छ इन ना, ভাঁহারা গ্রেণ্র (जनादरलत निक छे जादिनन कदत्र । विकी में देखिशान व्यादिशामित्रामान लर्ज नर्थककरक (प्रवर्शत नाग्रा व शर्यास छिलामना करतन। छाष्ट्रादमत विश्वाम ছिल य, दि, ভারতবর্ষ পরিত্যাগ কালে তাহাদিগকে মনোবেদ্যা मिर्वम मा, किन्छ शवर्गत (जामार्यस आहिरनत थि ज मम ज প্রদান করিলেন দেখিয়া ভাছারা অতিশা কটে পাই-श्रां इन। कल (छिष्म जार्मानिस्थमन धदर विशेष इंखियान जारणामिरयणानित मरखादा देशाउ इंशिड इइंटि প्रार्थन। जोहायां वर्शात क्षिका जाय ज्यान धिशाङा कि दिखा, जूडन जाइन कर्ज् क जाइन पड़ वाभिभवां झश्म इहेल। ভাছাদের এই নিমিত কৃষ্ট इछ्या कडक्छ। या छाविक, किन्छ मित्रादित कि निमिछ এত यञ्जभात छेम । इहेन जा हा जामता तु वाट भारि । ना। এদেশে একটা কথা আছে, ''এয়োন তের জেং, — नाट्ड मह्झ मह्झ।" पित्रात्र (य क्न नाट्डन डाइा जाधवा जानि ना। मित्राद्वत मानःका कि मदन नाई (य, जिनि कलिकां जां ज जिया इहेगां ज नियं किकां नाकुल इन धनर किक्र जार्यभानशाह इन? विद्राद्यद्र, मम्भामक ध्रथन यांन किंग्निंग इहेट हेक्हा कर्त्रन, তাহা হইলে তাহার গার্ণমেণ্টের ছারে রোদন করিতে इंद्र ना। তाश्र ि जित्र क्या वा वहे श्रेष छा छ इंद्र ज পারেন। তবে একটা কথা আছে। মিরার বোধ হয় মনে मत्न ज्ञारनन (य, प्रानात त्नारकत्र निक्छे जाशत कान शम नाई। (मगीय लाटकंद्रा जाहाटक खन्ना कद्रन ने व्यिशिष्ठ घृणा करत्रम। (वाथ इस मिरे निमिन्न चि ५७ वा कृत इहेश रहन।

THE AMRITA BAZAR PATRIKA.

CALCUTTA, THURSDAY, APRIL, 13, 1876.

Lord Lytton arrived yesterday under the usual salute His Lordship was immediately installed on the guddee. We give His Loruship a hearty welcome. From to-day His Lordship will rule over the largest Empire in the world. May the Father of all nations move his heart favorably towards the 200 millions of peaceful beings placed in his charge!

A correspondent has sent the following for pub-Lication:2

"Can you or any of your readers tell me whether a Director of a Government Wards' Institution is empowered, ex oficio, to insult a ward, such as ordering a ward's personal servant to pull his master's ears? I am given to understand that such a scene has lately occurred in one of the wards' Institutions. The sufferer being the son of a Raja who is dying of shame. Such is the fate of many of the scions of our noble families, who have the misfortune to possess large landed property!

0 -----A correspondent informs us that Babu Surja Cant Acharjya Chowdry of Mookta Gatcha, Babu Lalit Mohan Roy, Editor of the Sporting Journal called the Promodi, Babu Kailash Chandra Bose and few others, all Bengallee gentlemen, were out in the Malda District on a hunting expedition and bagged four Royal Tigers and a leopard. Babu Ray Churn Roy, the hero of Jessore, also killed a large tiger recently in a village called Charbillah. It gives us intense satisfaction to record the e manly sports of our countrymen.

Last week we gave particulars of a case between Mr. Webster, a Tea planter, and certain ryots of hittagong. We stated that though 8 ryots were hot down, and M. Webster was the aggressor, et he was let off on a fine of rupees 500 only. But, it appears, justice is 1 ot as yet satisfied. Mr. Kirkwood, the Magistrate, has given orders to prose-Scute the ryots who were sho down for rioting, and warran: has been issued against them on behalf of he Queen. The Pleaders and Mukriars, we hear also, have declined to take up the case of the ryots, for fear of offen ling those wh m they dare not offend. These are facts, which are spoiled by comments. So we allow the facts to speak for themselves.

We are glad to notice that an Industrial Exhibition opens at Rajkot in the latter part of December next. The Executive Committee formed for the pose have had it in view to collect all mineraletable, and animal productions-both natural and manufactured-which are obtainable in the various parts of Kat ywar. Kattywar, though not on the whole a very fertile province as regards its vegetable growth, is rich in minerals and manufactured articles. Stones of various kinds are to be had in almost all Talook is. The numulitie stones of Pore-bandar are largely exported to Bombay where they are used in erecting magnificent and durable buildings. The quarries of Dhrangdra give stones of several species and colors which are made into grinding mills, pots and toys. Silicious stones of about a dozen separate varieties are exported to Lambay from a little village of lankara in the state of Morbee. The crystail zed forms of silica and calcarious-spar are among the most beautiful stones of Tankara which make Cambay rich and famous for its workman hip in agates. The mount Girnar of Joon ighad is nothing but full of granite possessing several, kinds of valuable metals in the heart, and rich jungles of timber over and about it. State-stone, shale, clay, coal and ores of iron and copper are to be had in abundance at several places Kattywar may be properly called a cotton producing country, and its cotton is generally considered superior to that of Gujarat, especially that Tithal variety which is much valued at Home. Perhaps where in the Bombay Presidency wool is so much produced as in Kattywar. The Saleta wool plucked up from the hides of lambs carefully fed and fa tened, is so smooth and long that its production in a tropical climate will hardly be believed. If a Kattywar chief or noble undertake to establish a wool manufacture, how paying and useful will it prove! A woolen manufacture for flannel broadcloth, and other warm cloths of every day use is a sad desideratum in the whole of India we believe. Jamnaggur, which is next to Ahmedabad for its silk and cotton fabric, is rapidly losing its trade as every city of renown in India does, owing to the competition of Western countries. The ingenuity with which some of the Artists of Jamnaggur make iron-locks is greatly to be admired, but poor smiths! they are dying of starvation on account of their inability in varnishing, and giving a false show to, their articles, and also for a considerable decrease in the demand of their rough but useful, cheap. and durable productions. The town of Sihore is known in Gujarat for its pots and pans of metal, and that of Dhorajee for its carved and colored arniture of wood. For the sake of brevity, other towns of lesser importance are left unnoticed.

The Exhibition Committee intend to collect all To articles, to form a nucleous of musium after

ibition closes, and to give liberal prizes to

such artists as can make articles and new handy

machines, of the best or new kind.

It will be a matter of satisfaction to our readers to learn that this work of public importance is to be conducted and supported unofficially, and that chiefs and karbharies of our country have begun to appreciate the usefulness of such undertakings. His Highness, the Nawab of Joonaghad, has been pleased to subscribe Rs. 1000 as donation, the Native Administrator of Morbee has contributed Rs. 600, and it is hoped that other States which are not a few in Kattywar will follow the good exau ple set by Joonaghad and Morbee. We wish a complete success to the exhibition undertaken by our educated brethren of Rajkot and likely to be helped by all chiefs and noteworthies of Kattywar. Are not such exhibitions desirable in Bengal and other parts of India?

The case of Mr. Johnson, the Executive Engineer of Dacca, versus Khublal, first brought to the notice of the public by the Hindu Hitoisini, has been, we are glad to see, taken up by the East and ably handed too. It is a typical case and one of the hundreds which never come to the notice of the public. The facts of the case are very instructive, and serve to shew how they manage things in the maffasal, and how they mean to manage things here hereafter, through section 11 of the Presidency Magistrate's Act. Well, there was a natch just by the house of Mr. Johnson which disturbed his slumber. He went to the people and asked them whe her they had a pass. They had none and it was not necessary to secure a pass to celebrate a nautch in one's own house. He bade them to stop dancing but they disobeyed the order. He then fetched a Head Constable who charged them to stop, but they did not. Mr. Johnson still persevered and he then brought an Assistant Superintendent of I olice, who, however, succeeded in puting a stop to their amusements, but alas! for a short time only. Immediately on the departure of the Assistant, the nautch commenced again. This time Mr. Johnson took another step. He went to them and told them that he would not leave the place till they had ceased dancing. Be it recollected that we have hitherto followed the version of Mr. Johnson himself. Mr. Johnson says that he was then assaulted by 6 or 7 men, and the Magistrate, it is said, sentenced the dancers to one year's rigorous imprisonment. The Magistrate admitted that Mr. Johnson had no right to disturb people in the way he did, and that he was a tresspasser and therefore criminally liable, but he took no further notice of the fact. The Police Head Constable and Assistant Superintendent had no business to interfere in this matter, and the latter actually put a stop to the innocent amusement of the dancers by abusing his power, but the Magistrate took no notice of the fact. The Khansama of Mr. Johnson, the only witness for prosecution, gave his deposition too, but he omitted to notice the fact in his deposition. He took no notice of the depositions of the witnesses for defence who alleged that Mr. Johnson insulted and assaulted them, that he tresspassed and repeatedly disturbed them, that he defined the food of 50 or 100 men, on the sole ground that Mr. Johnson distinctly denied the allegation. But he took notice of the important fact that two of the accused were servants of Europeans and that eahanced the gravity of the offence! And the wise Magistrate at last comes to this profound conclusion that "if accused went after Mr. Johnson and attacked him in the savage and lawless manner described, they have been guilty of causing hurt. Yes if they did go, they were. If a man stole money he was guilty of theft. Who doubts that? We can still go further and solemnly declare that if a man deliberately and inlegally kills a man he commits murder. We can even bring the matter home to explain it more fully. If the Magistrate was guilty of partiality he was very culpable. So far we quite agree with Mr. Currie that if the dancers assaulted Mr. Johnson, they were guilty of causing hurt but we cannot agree with him in the conclusion that therefore the dancers must be punished, as we cannot on the ground above alluded to, inflict a punishment upon the Magistrate. Neither can we agree with him in the opinion that people in the service of Europeans ought to be more severely dealt with than those who do not hold such service. It comes to this. Innocent people were dancing at their own place. Mr. Johnson, the Executive Engineer, with the aid of police officers attempts to put a stop to their amusement, and then at last resolves not to go till they had ceased, and the dancers are sentenced to a rigorous imprisonment of one year.

LORD NORTHBROOK MEMORIAL MEETING. -The meeting convened by the Sheriff, was held last Satarday, under the Presidency of His Honor the Lieutenant Governor. There were about 300 persons present and a very small number of Europeans. It is needless to say that very good speeches were made, and Resolutions were passed, and an address adopted which was presented yesterday. Handsome donations from Vizianagram and Benares were also announced, and the meeting was brought to a termination by the usual vote of thanks to the

chair. Indeed all the usual forms of a Public Meeting were gone through, and nothing could have distinguished it from other meetings of this sprt but for a singular incident. There was a party of Ten souls who opposed the movement!

Now it so happened, that three of these Ten, belonged to the Indian League, and some of our brethren of the Press took advantage of that fact to connect the movement with that Body politic. The Council of the League have already disayowed all connections with the affair, and that meets all the requirements of the case as far as the Leaguers are concerned. But yet there are some other facts which may as well be mentioned. The requisition to the Sheriff to convene the meeting was signed not only by the Secretary to the League, but other prominent members of that body. Of the Ten who opposed the motion, only three belonged to the League. The gentleman who proposed the amendment was not a member of the League. When he proposed the amendment, the Chairman of the League himself was the first to oppose it. There were other prominent members of the League present who also joined in the opposition to the Ten. And last of all, we hope it will not be taken as a boast if we say, that if the Leaguers were at the bottom of this affir, they could have at least sent more than Ten souls to oppose the memorial.

There is a difference of opinion as to the merits of Lord Northbrook's administration, people holding extremely opposite views regarding it. To call a public meeting through the Sheriff, under such circumstance, for the purpose of voting a memorial, or an address, was not altogether a safe affair. The promoters, however, took the hazard. They no doubt calculated in their minds, that the people of this country are very apathetic and would never take the exertion of opposing any movement. They also calculated that innate modesty, timidity, the presence of the Lieutenant Governor &c. &c. would deter others to come forward. There was then the wording of the advertisement. It was understood that those who sympathised with the movement were only invited to attend. At least so Mr. Bell explained the meaning of the advertisement.

But it appears the Ten attached a different meaning to the advertisement. We speak under correction, for the action of the Ten was as much a surprize to us as it was to our fellow-citizens, neither subsequently have we got the slightest information from them on the subject. The meeting was "for the purpose of considering a proposal to erect, by public subscription, a fitting memorial to His Excellency. the Viceroy and Governor-General, who is about to retire soon." These are the words used in the advertisement. It is clear, therefore, that the persons present had the power of "considering"-and considering what? Not the nature of the memorial but the proposal. The persons present had, therefore, the right to consider whether a memorial ought or ought not to be voted for the retiring Viceroy.

Mr. Bell said, that the object of the meeting was to erect a memorial and not to pass a vote of censure. That was no doubt the object and nobody ever doubted it. But why was not that distinctly stated and then the Ten could have been prosecuted for criminal tresspass if they attempted to oppose the motion? The thing is, though the object was apparent, there was another object lurking at the bottom. It was to give a representative character to the meeting, it was to convince the world that the memorial was voted by the community at large. It was to serve that end that the advertisement was so worded. They could have easily added a line to the effect that only sympathisers are requested to attend. For, that would have set the matter to rest. But then the memorial would have lost its importance as coming from only a section of the community. Those who seek the advantages of a public meeting must also patiently take the disadvantages incident to it.

It appears the Ten took upon themselves to enter a protest. What their real intention was we know not, for neither were they allowed to take any part nor make any speech. So we speak under correct tion. They never intended to create any disturbance, or hamper the proceedings, for then they would have gone with greater force. Their object apparently was simp'y to record a dissent. Now let us see what actually happened. A public meeting was convened through the Sheriff, for the purpose of considering a proposal, or in other words, for the purpose of discussing whether the proposal ought to be adopted or not. About 300 persons respouded to the call. Of these 300, Ten persons were of opinion that the proposal ought not to be supported. These, in plain words, are the sum and substance of the sin committed by the Ten against whom such a hue and cry have been raised by some of our

Now what was the punishment of this great crime, the great crime of going to utter sentiments which one honestly believed, in a public meeting & They proposed an amendment, but that amendment was not put. They wanted to speak, but they were not allowed. It is said, and our contemporaries above alluded to are being merry over the fact, that they were bissed out and cries of "Turn them out," "Kick them out" were heard on all sides. Accord. ing to the opinion of our brothers, the Ten were eternally disgraced, and one of our contemporaries, has published their names, designations, professions so that there can be no mistake about them. Indeed they have been branded with eternal infamy and cast out from genteel society altogether!

Now to our thinking, demoralization cannot go further than this. We have enough of sorrows as a nation, but we doubt very much, considering our national depravity, whether our punishment is adequate to our sins. Ten gentlemen were invited to a public meeting to express their views on a subject before it; and these Ten differed in their views from the majority and wanted to say so. But they were not allowed to say so by the majority; the majority hissed them, turned them out and used such expressions as these "kick them out," and so forth. In the name of all things sacred, whose is the disgrace, whose is the cowardly act, whose is the eternal infamy? But see, our public organs, the instructors of the public, and the guardians of our public morality gloat over the fact, that the Ten were not allowed to speak, and kicked out of the assembly! They have no word of chastisement for the cowardly act of the majority and not a word in behalf of the constitution, and all their vial of wrath has been poured upon the devoted heads of the Ten. They were invited to consider a proposal, and as their considerations did not correspond with the considerations of the majority, they were turned out. And the guardians of our miblic morality say that it was they that were branded with eternal infamy!

We fight for the freedom of the Press, we are justly proud of the boon conferred on us by Sir Metcalfe. We are so sensitive of this, that the least attempt to encroach upon this liberty is received with intense indignation. If freedom of the Press is of so estimable value, is not freedom of speech equally valuable? Is it consistent in those, who are so warm advocates of the freedom of the Press, to put down liberty of speech in public meetings? But we have hitherto considered the negative side of the question; let us examine the other side. It is said Babu Shambhu Chandra is at the bottom of this movement. If it is so, he has no reason to be ashamed of it. He will no doubt be censured by his brother Leaguers for this highly imprudent step. He ought to have known, that the League cannot afford to sustain a defeat at this early stage of its existence, and his presence might have been taken advantage of by malicious people to connect the movement with the League. Under such circumstances, he should have not gone there, or if he had gone there at all, he should have gone with sufficient force to carry his point. In this nineteenth century people are not judged by their motives but success, and so

the poet said:

Treason never succeeds, and for this reason: If it succeeds, who dares call it treason?

But look to the other side of the question. This is the first time in the annals of important public meetings in this country that Ten men were found, conscientious and energetic enough, to oppose a movement. We lack energy, moral courage, and earnestness for all that. Our public meetings are altogether tame affairs, where people are taught only to raise their hands when they are asked to do so. Here a most momentous point was at issue. Ten persons who were present there thought that they ought to enter a protest against the views of the majority Others in their place would have remained quiet, but they chose to take a decided and bold step. We said bold, but fancy, who, of the two hundred millions, from Cape Comorin to Himalaya, would have dared what they dared? At least none yet has given any practical proof of it. They dared to pass a vote of censure upon a Viceroy in a public meeting who was only a few yards off. The Lieutenant Governor himself was in the Chair! There was the sure prospect of a defeat, and no prospect of any reward, but yet in spite of all, amidst hisses of the many, they boldly fronted the Lieutenant Hovernor himself to press their views upon the public! We only wish there were many such Tens in our country.

The political significance of the action of the Ten can scarcely be over-rated. Rulers will thus find, that henceforth, to secure an acknowledgment of their good services from the public in general, it will be necessary to do something more than to keep a few leading men in good humour. The promoters of such movements will take better care in future. They will never more dare to call public meetings before feeling the pulse of the nation. And what a wholesome check this will be upon the action of our rulers! The Ten have proved that we have rights by which we can publicly censure a Viceroy for his conduct and the Viceroys will take care to avoid such censure by their actions We have hitherto been celebrated only for giving addresses, but the Ten have led the nation one step onward and for that the nation ought to be grateful to them. We hope it will bear fruit and encourage others to take interest in public affairs and make use of the constitutional privileges we enjoy.

Though "hissed" "kicked" and treated so honorably by the gentlemen present there, the Ten carried their point however. What they intended actually to do we do not know. Perhaps they want-- ed to take exception to certain expressions, but the friends of Lord Northbrook have by their injudicious zeal, injured His Lordship much more than the Ten could have done. The speech remains untold

and it is on record that the Ten were suppressed unconstitutionally. This entirely spoils the proceedings of that meeting. But above all, the Ten forced the gentlemen present there to confess, that the meeting was for the admirers of Lord Northbrook only. This at once denudes the "Public Meeting" "convened by the Sheriff" of its importance. It becomes altogether a private affair and this was owing to the action of the Ten. And who after this can say that the Ten were defeated? The victory was theirs, complete and thorough. --- 000 ---

THE TITLE'S BILL.—The Queen has graciously signified her intention of taking the title of Empress of India, as she was convinced it would give satisfaction to the people of India. This condescension is owing to the loyal reception that we gave to His Royal Highness, and this is the reward that Her Majesty means to bestow upon us for our loyal action in connection with the visit of the Prince. Some of our contemporaries have already expressed their satisfaction at this gracious condescension of Her Majesty, but the majority have as yet taken no notice of the fact. This, however, goes to disprove what Mr. Disraeli so cheverly said of the people of India in regard to this Bill. The Premier had two important points to urge in support of this Bill. One was that the people of India, unlike other nations, attached a great deal of importance to forms, and the mere addition of a title had great effect with them; and the second point was, that this assumption of the t tle of Empress of India would give universal satisfaction to the natives of India. The one is a matter of opinion, the other is a matter of fact.

As regards the first point Mr. Diserneli only follows the general opinion on the subject, as entertained by the Anglo-Incians here. This opinion is, however, wrong. No people in the world are so careless of forms in regard to public life as the natives of India are. Certain forms were observed in Mahamudan Courts certainly, but those are things of the past. There is no doubt a great deal of contention regarding precedence and the number of salutes and so forth among the Princes. But in this respect the Hindoo Princes are not peculiar, neither do we consider that these are mere matters of form. In public darbars, every sensible man must feel himself humuliated, if the respect due to him is not shewn. Such matters of precedence have created wars in Europe, and we do not see why the Princes of India should not exact the honor due to them like all honorable men. The Europeans, though professing themselves very independent in this respect, are in fact wedded to forms so completely, that they meet with them at every step. Even the cocking up of a hat must be under certain established rules, which no European in res pectable society dares defy. The thing is, we alone do not choose to be put down for a nation of fcols. To argue a question, or settle a p int, upon such basis as the stupidity of the people, is what we protest against. We are sick of those arguments, which begin with the premise, that though this is a foolish thing, and worth not the consideration of any sensible man, the people of India attach a gre t deal of importance to it and so forth.

The second point to which the Fremier gave importance, indeed it was the most important point in his speech, was that the assumption of the title would give universal satisfaction to the people of India. After this assertion, the Premier found that it was necessary also to state how he came to know it. To this he merely said that he came to know it, it was a fact, that the people of India would like it. That he came to know it from informations collected by Government. He did not mention how it was a fact, or how he came to it. He rested the question upon his own tes imony, and wished the public to depend upon it. Mr. Gladstone, however, doubted the testimony. He sarcastically remarked, that he was not aware that the Government had any secret communication with the people of India, or was more communicative to them than to the House. For it was the first time that the House came to know of the intertion of Her Majesty. It was not, however, explained to the House, how the Government came by the information, neither is it known to the people of India as yet. There was certain'y no plebiscite taken, nor was there any public meeting held, nor was the matter made a subject for newspaper discussion. The thing is, the Government had not taken the people of India into its confidence as sarcastically observed by Mr. Gladit was known to the House.

Some of our contemporaries, as we said above, have already expressed satisfaction at this condescension of the Queen, but unfortunately they have not given their reasons. This assumption of the title

either means something or nothing. If nothing, the most sensible course is to remain silent. If something, the most sensible course is to examine what that something is, before we pronounce any opinion upon it. The strongest argument that the British. Government could bring in support of the Bill, was that this assumption of the title would give universal satisfaction to the people. This

argument is then founded upon a statement. If

this statement is fact, the argument is unassailable; if it is not a fact, it falls to the ground, and with it the strongest or rather the only argument in support of the Bill.

But it is necessary, before we proceed further. to allude to another important remark of Mr. Jise raeli. He said that from information at the command of the Government, he came to know the fact of the satisfaction of the people of India. But he further said, that the natives had reasons for this satisfaction. When we read so far of his speech it may be imagined, with what intense feeling we expected the disclosure of these advantages, that would accrue to us from the assumption of this title. We expected a disclosure of the advantages from the Head of the Government and the commencement of a new era for India. But the Premier stopped short. He found the dangerous ground he was treading, and did not commit himself to any policy. So we know nothing further than this, that the natives of India are for such a title because they see the advantages, which advantages remain as yet unknown to the people of India. Neither have our contemporaries who have expressed their satisfaction, nor the Premier who spoke on cur behalf, disclosed the reasons why the assumption of the title would in any way benefit us. So we must try to find them out for ourselves.

There are sentimental people who are guided by their feelings. If hether there are such people in India or not is beside the mark, for the opinion of such people are not worth much, either here or in any other part of the world. To say, therefore, that the Queen is so much loved by the people of India, that this condescension on her part will delight them all, is a language which is not understood by the generality of mankind. Loyalty is not a sham but a reality, but still it is inferior to love. Now we would like to see a man or a woman who would be quite content with merely a sentimental acknowledgment of love. Would a peasant girl in India be grateful to the Prince of Wales, if His Royal Highness would publicly acknowledge, that she is her wife, when this acknowledgement in no way betters her position or secures her any right? She would, on the contrary, consider it a mockery. We think, therefore, that this proposed compliment may not satisfy the people of India simply because they love Queen Victoria. Subjects love their King, because they get something in return. Her Majesty is graciously pleased to pay this compliment to us, but does any substintial boon accompany this compliment! That is the point at issue. If the compliment comes alone, unaccompanied by anything substantial, we can return it by another on our part to our sovereign, by expressing our gratitude at the great honor done us. Andthus there would be a formal interchange of contesies between the soverign and her subjects, harmles. enough in their effects, but serving no useful purpose whatever.

To give satisfaction, the comptiment must be accompanied by substantial boons. But what are they? Mr. Disraeli says there are some advantages, but they are locked up in his breast. Will Her Majesty. after the assumption of this title, give us a local Legislature? Will it please her to throw open the doors of the Civil Service? or to lessen the rigors of our criminal laws? Will there be even a tax remitted? We believe no. The British Government contemplates no such thing. What i contemplates is this. The people of India and fond of forms, and so this formal assumption of the title will please their fancy. What a fine compliment the British Parliament pays to our understanding! There was a time, when British merchant in America, used to get from the natives of the place, furs in exchange for glass beads, and buttons, for these pleased the fancy of the savages!

When the title of Empress of India was proposed, it caused a great deal of alarm amongst the natives of England. Because the title smacked of despotism, though it was a local title that Her Majesty sought and with which the English people had nothing to do. Now just ponder on this point. The people of England were alarmed, because the Queen wanted to take a title, which did not affect them but a far distant country, because it had bad as ociations connected with it, because the title of Emperor or Empress always conveyed the idea of despotism. Would it be natural to suppose, that under such circumstances, it would give any satisfaction to those, whom it affected deeply? Just think also, that the people of India dread the power of Russia, because it is a idespotic power, under the control of an Emperor. stone, nor did they know any thing about it before This assumption of the title of Empress brings the Queen to the level of the Russian Autocrat. We are subjects of the English crown, which means that we are under a constitutional government. We are proud that it is so. It is quite true, we enjoy but very few of the advantages of a constitutional Government. But we expect better times. We expect to secure the privileges of constitutional Government one by one, as we grow in age and knowledge, under the fostering care of the British nation.

But here is despotism legalized. We have been now placed beyond the pale of the British constitution tution. We shall be seperated from the constitution no sooner the Queen assumes the title of Empress

India. We appeal to the British constitution when wronged by Indian Autocrats; but the British nation puts India, and India alone, beyond the pile of the glorious constitution of England. When Her Majesty announces, that she intrids to take the of Empress, she indirectly proclaims, that India loses the protection of the British constitution, and is no longer a part and parcel of the British Empire. Is this then the reward which India is to get for the loyal reception it gave to His Royal Highness? The people of India are fond of titles and in proof of which see how some of them has ker after Roy Bahadoorships and Rajaships; and therefore Her Majesty to please the people of India takes an Indian title!

SCRAPS AND COMMENTS

The Revd. Mr. Long, one of the greatest authorities on Russian Questions writes to the Herald of Peace to the following effect in reference to Russia's

progress towards India:-

While the Press of England has recognised the advance of Russia in Central Asia as a measure necessary for her own development, called for by the needs of a growing Empire, and beneficial in its civilising effects, yet it is strongly felt that the contact of two great Empires involves the danger of collision -a contingency to be deprecated to the utmost, inasmuch as the real interests of both Empires, Protevitustanding minor differences, are similar, and their influences over the down-trodden races of Asia are for good. Rassia, as a rising Empire, requires a wide field for expansion abroad, and all efforts made to fix it within boundaries have been vain. Therefore, her pent-up energies must find a vent; but Central Asia, with its sparse population and few resources, does not afford an adequate sphere in this respect. The stream of Russian advance now flows with full force in that direction, dashing up in its way against the Indian frontiers; it cannot be embanked, but it may be partially diverted. Asia Minor presents such a sphere of partial diversion, in accordance with the national aspirations of Russia, that regard the acquisition of Turkey as its manifest destiny."

Mr. Long thus concludes :-

"In Central Asia, and on the Indian frontier, the two Empires are coming into close contact, risking a collision from the intrigues of native chiefs and the jealousies of frontier officers far away from England's base, where England has no allies, and no fleet can come. On the other hand, in Asia Minor, the stream of Russian progress would low on until by extension it would become a fertilising stream, as has been the case with England's power in India itself. It is far safer, in the interests of European peace and of England itself, to have Russia in the Mediterranean than on the frontiers of Afghanistan. England has shown her appreciation of India's interest in the late purchase of Canal shares. The occupation of Asia Minor by Russia would not be likely to be kept in check by the rival interests of Austria and Germany. The intervention of England with Russia in Turkey will lead to the counter check of Russia's interference with England in India-transferring her attention from the Bosphorous to the frontiers of Franistan and Kashmir. The extrusion of Russia from Lakey is her intrusion into India."

The Hajut system obtaining in Madras appears to be barbarous in the extreme. The local Stan-

dard says:--

"The Torture Comission was held so long back as 1854 and the revalations unfolded by its enquiries threw a lurid light upon the Police administration of that time. The local Government then adopted tringent measures to put down torture practiced by the Police either to extort evidence or for any other purpose. Twenty-three years have passed by since the iniquities of the Police, in this respect, were unveiled to the gaze of an indignant public and to a Government bent on reform. But, as a matter of fact, the nolice lock-ups in Madras continue to be even now dens of Cature to the miserable wretches who, falling into the grasp of the Police, are cast into these places of incarceration. These lock-ups are generally looked upon as pandemoniums in which the unfortunates who happen to get into them are kicked, beaten, and otherwise ill-treated by the subordinate officers of the Police with the object of extorting confessions and bribes. The other day, Colonel Weldon, very properly made an example of a Police Head Constable who had been guilty of ill-treating a prisoner, and. His Worship, by his remarks, shewed that he is determined to visit all such cases with a severe penalty."

Purusharthaprathaini, an Anglo-Teligu Journal, has the following on the "Whims of Authorities." "First of all, it was notified that all Government Servants must pass the U. C. S. Examination at least. Afterwards, those who were in service before 1859 were exempted from the burden of passing any examination. Some time ago, it was ruled that no unpassed candidate can receive a salary above Rs. 25 in any Public Office, and afterwards the order was changed that unpassed persons in Public employment cannot get more than Rs. 20, and subsequently it was ruled that Rs. 15 only are to the lot of the unpassed: but now again an order seems to have come out prohibiting the employment of unpassed persons in the U. C. Service on any low amount of salary, and also spreading its retrospective effect up to 1864. Hitherto, posts of Rs. 20 or 15 could be held by the unpassed, but the order now issued deprives all such persons of their situations though their period of service be a pretty long one and though their experience and practical abilities make them very much better than passed candidates. O pity? Where is charity? Does the Government know its own mind? Why should the Government first allow unpassed persons to remain hopefully in the service? Why should it now be so uncharitable as to see many hundreds of poor contented souls relentlessly thrown out of employment? Does the Government think that passed candidates fresh from schools be more serviceable than the unpassed who are good Accounts and good pen-men? Is this a just act?"

It is a commendable virtue in a Government to supply the wants of the different sections of people by shewing them means of protection and improvement: but to deprive them of livelihood and ke them poor and needy is more than unjust.

little of Empress seems to have had a very ा upon at least one gentleman; for it ap-

Disraeli's motion to read the Titles Bill a second time, a scene occurred in the Strangers' gallery of the House of Commons which the Globe describes as "painful:"-

"When the strangers' galleries had been cleared, it was found that there was a man sitting in the Speaker's gallery, who on being requested to leave refused to do so. At this time the floor of the House was quite deserted except by the clerks at the table, who were completing their record of the night's proceedings; but several hon, members in the lobby hearing that one of the strangers declined to quit the House, came back and soon a pretty large group was collected, all looking up with astonishment at the gentleman above the clock, who was surrounded by messengers and policemen, and again and again urged to go. He still refused to go, however, and when it was suggested that he should be turned out, he exclaimed that it would be a "pretty hard job for anybody to do that," and immediately afterwards, rising to his feet, and addressing the Speaker's vacant chair, he shouted, 'I am here under the protection of the country. I appeal to the Empress, to the House of Commons, and to the soldiers. I appeal to all three.' This he repeated several times, but without any trace of the excitement produced by drink, and it was soon apparent that the unfortunate man had altogether lost his mental balance. Steps were taken to remove him from the place, but he still continued to call on. The Empress, the House of Commons, and the soldiers' and then 'the Speaker,' shouting across the building as he was laid hold of by the police, 'Is the speaker here?' Then come an appeal to the policeman, 'Don't tear my clothes;' and, and finally, as he was carried down the steps from the gallery, came a last appeal 'to the serjeant-at-arms and the Home Office.' The scene only lasted a few minutes, but it produced a most painful impression upon the few who witnessed it, though every care and consideration was shown in the removal of the unfortunate man. It afterwards transpired at the Westminister Police Court that the excited gentleman was a coal merchant named Robert Ginn". Evidently the title Empress does not go well with Gin.'"

The following interesting letter regarding Sir Salar Jung's visit to Europe has been published

in the Times of India:-

"I laughed with much consumedness the other day when I read the paragaph--demi-official in form, and wholly officious in fact-of your Allahabad contemporary respecting the non-departure for Europe of the regulator of the Nizum's State. I am able to inform you positively that His Excellency is to go; he starts for Bombay next week, and will then set out on board a steamer hired for his sole accommodation and that of his friends-likewise of his friends' friends. His Excellency's experience in voyaging has not hitherto been so extensive as that of his coreligionist, Sinbad. Indeed, the only acquaintance he has made with the dangers of the deep is confined to navigating Meer Alum Tank, a stormy enough sheet of water at times. I have seen breakers on that tempestuous inland sea ten inches in neight. His Excellency will make his first acquaintance with the mal de mer, Neptune willing, just off your lighthouse. In his transit of the Arabian sea, I beg to wish him "fav'ring gales," or at least a good head of steam. In due time cinerous Aden will behold him, and he in turn will view with delight the fertile island of Perim buried beneath blooming flowers and guarding the gates of the Erythræun Sea. In coasting along the natal land of his faith, why should not the Minister stop at Jeddah, or Djidd'eh, as some exact people would write it, and take a run up in Mukkah, there to behold the Ka'aba, and become in consequence a Hajji like your Ulyssean friend, Captain Burton? Time, I fear, would fail him. Four months is the limit of absence which the conscientions Minister has allowed himself, and with a view to being back in tine, the work of each individual day is carefully cut out beforehand. The Gulf of Suez will in due time receive the Hyderabad party, where they can speculate upon the possibility of their floating over the buried wreck of Pharaoh's host. M. Lesseps' ditch will yield them a passage into the Great Sea, as our ancient friends and prototypes the Hebrews used to call it. From Port Said the voyagers will steer N. W and make for Naples. The place to see and die will thus be the first spot of European ground on which Sir Salar will plant his foot. From the rumbling and grumbling and fitful movements of the Vesuvian crater His Excellency may gather some suggestive ideas of the state of political unrest in which the continent of Europe is plunged at the pressnt moment. From Naples he will proceed to Rome. I have a strong suspicion that the pious Mussulman noble will he horribly shocked at the amount of graven images which will every where meet his view in the Eternal City. Paris will of course be favoured with a visit from our local ruler, and he might there advantageously take a lesson in the necessary art of putting down street insurrections. A Baron Hausmann is much needed to enlarge and open out the streets of Hyderabad. Sir Salar's French is superior to that taught at Stratforde-atte-Bowe, and he will thus be enabled to get along with some degree of comfort in the Paradise of sainted Americans. Then your dirty. sloppy, slobbery, gloomy sooty island, "the home of a trueborn Englishman" of songstral celebrity, will receive His Excellency. No wonder, he will cogitate with force and frequency as he finds himself enveloped in stifling fogs, no wonder that Englishmen are so fond of leaving so outrageous a climate and coming to stay under the bright warm suns of the Deccan. Is he to push the Berars question? some one will ask. No, he is not; he will not personally exert himself to secure any discussion of the question while he is in London. But Gracious Heavens. if he does get the Berars back, what will become of the snug billets and warm corners in which sundry gentlemen are ensconced in that part of the world? His stay in England will not be a protracted one. He will be for a short time the guest of the late Viceroy, and these two dignitaries, ex-and present, will have a quiet chat over that correspondence in which poor Mr. Saunders was made the catspaw of the people in Calcutta. I have not heard it rumoured that there will be any meeting arranged between the Minister and the late Resident. Some time ago I set you, and consequently the wide world, right as to the real inviter of the Nizam's Premier to England. It was not the Duke of Sutherland, but the Prince of Wales, which does not look as if His Royal Highness had taken the Nizam's absence from his Bombay durbar very much to heart. The future Emperor of India will entertain the Minister of his greatest feudatory for a short time. introducing him to his august Mother either at Windsor or Balmoral, whichever place may be at the time honored

The conservative reaction that is sweeping over Great Britain is not confined to the region of politics. In the preface to the latest edition of Debrett the following passage occurs :--

with the Royal presence."

"For some years past the numbers both of marriages and

births among the titled classes and their children had been gradually waning; in 1875, however, a material change occurred, and the year is remarkable for the great number of fashionable marriages that were solemnised, and the many children that were born to those whose names appear herein (the Peerage, Baronetage, &c.,) or to their immediate connections." It would be too much to say that Mr. Disraeli has done it all, but certainly he ought to be presented with slices from the wedding and christening cakes of the "upper ten," which under his spirited Government ha found courage to marry and replenish the silent nurseries of May fair."

The London Post Office report furnishes much material for amusement and reflection:-

Last year twenty thousand letters were posted without any address, i. e. in blank envelopes. Four and a half million letters were received in the "Returned Letter Office." These figures also represent the number of additional missives passed through the post on the day devoted to Saiut Valentine. Frogs, leaches, tea, coffe, hops, watches and limbs for dissection are posted. The Dead Letter Office clerks deserve to be reckoned amongst the sharpest and claverest of mankind for their skill and patience in deciphering the most incomprehensible addresses. Somebody tried the Post Master General's subordinates with postal cards addressed and written in short-hand, and they were deciphered and delivered correctly; but it is questionable if the cleverest of them would be able to find "Mr. Smith at the back of the Church, England." That is how one letter was addressed. The cover of another bore the following startling direction :- "This is for the young girl that wears spectacles, who minds two babies." The girl's residence was in Liverpool, and her correspondent finished his curious direction by giving the name of the street and number of the house; so also did the writer who directed a communication to "Her that makes dresses for young ladies that lives at other side of the Road," &c. Imagine the difficulty there must have been in finding the rightful owner of a letter addressed to "My dear father in Yorkshire at the white cottage with the white palings." Yorkshire probably contains a good many cottages answering that description, and the originality of the direction might have been the cause of much dissension amongst the "dear fathers," who thought themselves entitled to the letter.

An English Paper says:

A fee of three hundred guineas for one visit was paid to Sir William Gull on his attending a private patient in a Liverpool suburb the other day. It is a serious thing, of course, for a physician with such a practice as that of Sir William to absent himself from it even for a day, and indeed a loss might very easily be entailed which it would be impossible to repair. This is the reason why the fees asked by eminent medical men for visiting patients at a distance are, and are intended to be, prohibitive. In the present instance the ease was one of typhoid, and the patient a young lady. It is stated that the treatment which was being followed by the local practitioner was in every respect confirmed by the Court Physician of London."

The Madras Mail furnishes us with a full description of the recently invented "type-writer" machine, which promises to be a great boon to all

those who have much writing to do :-

"The instrument is mounted on a stand like a sewingmachine, which it also resembles in size, as it occupies about a cubic foot of space. In front at its base is a small key-board, with one key for each letter of the alphabet, the numerals and stops, &c., the depression of which causes a corresponding sign to be registered; and immediately the key is released, the paper with its printed sign is automatically shifted the required distance to receive the impress of the next letter. At the end of a word, a key designed for the purpose spaces the requisite distance. In this manner a line is printed off. When its end is reached, the machine strikes a bell as a warning to the operator, who immediately presses a treadle with the foot, whereby the paper is sharply brought back to its original position; the paper is likewise moved upward a certain distance, by the same action, to prepare for a new line. The manner in which the type works may be thus briefly detailed. Each key is attached to an arm running upwards through the middle of the instrument, and all the arms are arranged in a circle. To the upper Portion of each arm a smaller one is levered, bearing at the end a letter corresponding to its particular key. When the keys are not depressed, these smaller arms hang down, and the depression of the keys cause the letters to strike the centre of the circle; hence care is necessary not to depress two keys at once, for the corresponding letters, unabls to occupy the same position at the same time, would then become locked. A ribbon, saturated with a special kind of copying ink, is immediately in front of the letter paper, which is strained round an india-rubber roller, and the sharp blow of the type against the ribbon and paper causes an impression capable of being copied into letter books. The operator, when accustomed to the use of the instrument, is able to print off matter from dictation much faster than it could be written in long hand. The average speed of the pen is from 15 to 30 words a minute, whereas the average speed of the machine is from 30 to even 60 words per minute, accorda ing to the dexterity of the operator. Thus, with practice, 10 hours' work with the pen can be done with the type-writer in 5 hours, and one skilful operator on the machine is fully equal to two expert pen-men. Moreover, the operator can write with any finger of either hand, and can sit or stand in any position the while. Further, by the manifold process, sixteen copies can be made if required." The cost of the machine is only £21 and it is already being adopted in large offices in London.

On the spirit of modern Indian legislation, the

Indu-Prakash has the following: -

"The Bombay Revenue Jurisdiction Bill, which has just passed the Legislative Council of the Government of India, is another off-spring of the noble policy of liberal England represented by the civilians in India! The news of this Bill, passing after an unprecedented hard fighting for 21 years, was last week flashed to the dailies. After all the opposition of the whole of the Indian Press, the several Associations in India, the East India Association, and the local Government, Councillors, and High Court Judges, Lord Northbrook has taken the credit of bestowing upon the Indian ryots the blessings of placing their destinies completely in the hands of the all-benevolent and merciful Collectors, and ridding them of the mechanical and inexorable justice of the Civil Courts, untrained as these are in revenue affairs! Indeed, but for Mr. Hope, with his complete knowledge of revenue affairs more probably than any other civil officer,' who had given the greatest assistance to the Government of India in this important measure, the people of India would never have been so impressed with the great truths that the High Court cannot decide revenue cases because they are not trained

in revenue questions, and the Bombay High Court's decisions may he doubted by a revenue officer sitting in the Legislative Council !"

The Bombay Gazette publishes a long despatch from the Secretary of State, and other papers, regarding the future arrangements for the selection and training of candidates for the Indian Civil Service. The decision arrived at is, in brief, to reduce the maximum age from twenty-one to nineteen, the minimum age remaining fixed, as at present, at seventeen. Of the members of the service who expressed any opninion on the question, thirty-three were in favor of raising and twenty-three in tavor of reducing, the age. The arguments which have led the Secretary of State to adopt the view of the of the minority are embodied in the following para-

ghraphs of the despitch:-The most cogent argument for taking this course is that a University education cannot be ensured for the candidates by any other. Much has been said against the system of special training under which most of the selected candidates have been prepared. In itself, it is undoubtedly an incomplete and partial form of education; but, such as it is, it is an inseparable accompaniment of selection by competition, especially when the competition is severe. The candidates can spare neither time nor energy for any other subjects of instruction than those which will tell upon the examination. Every hour spent upon irrelevant learning is an advantage gratuitously presented to a rival. Teachers, therefore, whose mode of instruction is exclusively designed to obtain success in the examination, and who recognize no other object of endeavour, must necessarily be preferred to those who have a larger aim. The University course, which must provide for other pupils besides the candidates in the Indian competition, can never be so perfect an in trunent for gaming marks at that examination as the instruction of the special teachers. Candidates therefore, before, selection will not willingly resort to it. No such afficulty hinders a residence at the University after selection. The further examinations through which the candidates Lave to pass will not be competitive; the special subjects are such as can be studied there with peculiar advantage; and a powerful encouragement can be offered to a University residence, by restricting to those selected candidates who frequent the University the subsistance allowance given by the Government. It would obviously be impossi le to offer any similar inducement to the whole mass of candidates previous to the competition.

A lower limit of age is recommended by another emsideration of importance. Out of the number who present themselves for competition, it is certain that four-fifths must fail, because the candidates are usually more than five times as many as the vacancies; and no prudent parent, in selecting a profession for his son, will leave this certainty out of consideration. Some professions are absolutely closed, others are almost impossible, to a man who thinks for the first time of entering them at the age of 22. A man, therefore, who competes for the Indian Civil Service at that age, undoubtedly strives for a valuable prize. but does it at a formidable risk. He stakes, in a measure. his change of self-support upon the result of a competition in which it is certain that four-fifths must fail. It is more than probable that such a risk must weigh strongly with parents, and diminish the field of competition, especially among the professional class. But no such apprehension will be possible if the limit of age is fixed at 19.

It is needless to say that not only the balance of argument is the other way, but that the decision of Lord Salisbury will prove a very serious mistortune to India.

A Letter from Vienna in the St. Petersburger Zeitung says that the question which now most occupies the attention of Austrian diplomatists is how to provide for the return of the Herzegovinian fugitives to their homes :-

It is not only the dangers with which they are threatened by the Mahomedan population which are a source of anxiety; the great difficulty is to supply these unfortunate people with the means of rebuilding their dwellings, and of providing themselves with the necessary stores of provisions, cattle, seeds, and agricultural implements for the cultivation of their fields. The number of the fugitives exceeds 100. 000 and the small remnants of their property which, they brought with them when they crossed the frontier have long been exhausted. Their houses, agricultural implements, and cattle have all disappeared, and it is very questionable wheither the Porte, however willing, will be able to muster up sufficient funds to replace them, while, if they are not replaced, at least to some extent, the result must be a general destitution, if not famine, for which neither political reforms nor the efforts of diplomacy can provide any remedy. Negotiations have accordingly been opened between the Vienna Cabinet and the Porte on the subject: but though the Turkish Government has declared its willingness to receive the fugitives and to grant them a free pardon, it has not touched upon the question of supplies. A further communication was then sent from Vienna, pointing out that the insurrection had been mainly caused by material grievances, and that the concessions now made to the rayahs, will prove illusory if they are only permitted to return to their devastated villages. and are not at the same time afforded the means of existence.

Such a proceeding can only tend to make the insurgents more desperate, and to prolong the conflict notwithstanding the pacific intervention

of the powers.

No one can doubt that Egypt is distined to pay once more a very important part in the affirs of the world. Its people would seem to have acquired the happy knack of turning all things to account. In the utilization of commercial products, this hes already gained for them some applause, the reader therefore will be the less surprised to hear of the great preparations making in that country for putting in a good appearance at the American Contennial exhibition :_

"The irrerest which Egypt is at present exciting justifies us in considering for a moment its commercial products as they are set forth in the catalogue of the contribution of the Khedive to the approaching Exhibition. The catalogue is splendid and comprehensive, and shows that there is much more than corn in modern Egypt. This catalogue comprehends 6,000 specimens. The display of cotton alone contains 2,500 samples, including specimens of the crops of the past eight years, with the prices they brought in Alexandria and Liverpool. Sugar, raw and in a refined state, figures next in point of importance. All the grains which make glad the valley of the Nile-wheat, maize, barley, beans, and peas; a large variety of fibres, some

less well-know than hemp and flax; all the woods of Egypt, in sections of trees polished on one side, will figure in departments side by side with dates, olives, tobacco, indigo, perfumery, honey, saddles of curiously-embroidered leather massively-mounted in gold, scimitars with jewelled hilts, furniture inlaid with ivory, silken curtains, drain pipes, shovels, hoes, axes, books for the blind, copies of the modern newspaper, and specimens of ancient papyrus. These several native products are ticketed with the name of the localisty from which they are sent, whilst close at hand is to be a large map bearing the legend, Egypt in the Centennial Year of the American Republic. Thus visitors will be enabled to see the native pr dure of this wonderful country on the Nile bank, and to trace out for themselves the various points of geographical interest.

It would appear as if England were going to be avenged for the alabama affair:-

"A rumour comes from Washington that the Secretary of State anticipates an English claim for indemnity against the United States on behalf of Englishmen who suffered by the Emma Mine scheme, they being deceived into the belief that it had the endorsement of the United States Government through the appearance of the nane of the American Minister as a trustee. If England were seriously to advance this plea, it should have as good grounds in its favour for damages as the Americans were able to shew to the Geneva arbitrators on the Alabana depredations."

But England is prudent enough not to quarrel with her American cousins.

A minifesto his been issued by the Herzegovinian insurgents; the part relative to England is as follows:-

"Mighty England, until lately the greatest friend of Turkey, nursed it, thinking she tended a deserving child, who would grow up into a worthy man, generous and useful to other nations. But England, too, nov opens her eyes and discovers that instead of a man she has fostered a poisonous serpent which, once great and strong, has become an evil to mankind an evil which would not only stallow or poison mankind, but would even bite the hand that fed it. The powerful English State has allowed Turkey to fall into a destructive abyss, and listening to our cry for relief, gives us her assistance, for which we owe her an eternal debt of gratitude."

The Times Special correspondent Dr. Russell

"The writer who can give a fair, satisfying account of any one week of the Prince of Wales's wanderings possesses an art more wonderful than any which the photographer, the artist, the poet, the historian, and the Court Circular Editor could exercise if they were combined in their abstract excellences in any one person. It is not "wild warbling Nature all," but it is far, "beyond the reach of art" to put into a column or two of newspaper type impressions of an ever-varying panorama of strange scenes, cities, processions, reworks, durbars, chiefs, presents, receptions visits, salutes, banquets journeys running through seven days from post to post. Any one of these would furnish material for a letter as long as those which are devoted to feeble summaries of the pageantries which succeed each other as days follow days without the interval of nights. Most of us have admired the grand procession which the late Mr. Harris despatched from the side scenes to inaugurate the coronation of the Prophet in Covent Garden, but very few would care to read an account of it night after night. Covent Garden is a geographical fact to the people who frequent theatres at home; but what is Baroda, what is Delhi, or what is Agra, or what is Gwalior, or what is Joypore to them? These are names, mere names. Yet be assured that those who have seen the most magnificent and extraordinary spectacles ever beheld on or off the stage in these later days have never witnessed anything like the displays which day after day unfold themselves for the Prince of Wales. At the end of the week there is not. I firmly believe, any one here who can well distinguish between one display of fireworks and another, one banquet and another, identify his elephants or his teuts, draw a line between one fine procession and another, or pretend to give a particular account of what he saw at one place without running into the sights which bolonged to another scene. If there were such an one, to what end would be his peculiar ability? He could scarcely hope to interest those to whom India is a more geographical expression in accounts of what was seen and done at Agra, Gwalior, or Jaypore, Scindia is to millions of Englishmen much the same as Prester John was to their ancestors, Jey Sing, who built splendid cities and palaces, and who founded astronomical institutes when England was scarcely conscious of Newton's glory, and when London was "a greater waste of burnt ruins, with a few fair houses on the banks of the river and a goodly cathedral as Westminister," is to many more a personage as new as any of the African Potentates to whom Baker and Cameron have lately introduced the public."

INDIAN SHAMS AND MR. DISRAELI'S SHAMS.

(From the Bombay Gazette, April 1.)

When a burlesque actor, not long ago, sang a song in the Bombay Theatre about the prevalence of shams in India, he took a juster view of Indian affairs than Messrs. Eastwick, Monier Williams, and other distinguished travellers in Hindoostan. Sham, or lacquer, at least, pervades all things Indian now from the Council to the keranee, and there is not a section of Anglo-Indian or native society free from it. There is the Government of India, to begin with, preaching liberal ideas and practising Tory facts. There is the Church, professing Protestantism and playing Papistry. There is the Army, with all sorts of Generals and Commanders-in-Chief praising it to the skies, though it is devoid of officers in the native service, and compased of mere boys in the other. There is the mercantile element, whose probity is so remarkable that a common act of houesty on the part of Baring Brothers, the other day, has gone the round of the papers as something both unique and exemplary. There is the Law with barristers unblushingly taking fees for work they never performed, and there is Justice, under which the wretched ryot groans. There are our woman kind ruining themselves and their husbands in dress, and there is man, mean and mendacious, striving to keep up false appearances, and truckling to everyone who can help him to do it. But after all, what else can be expected but a plentiful crop of evils from such a Mammon-worshipping age and country as ours is? It is the devil whom all classes are setting on high to fall down and worship, but we have it on the best authority that we cannot serve God and Mammon. The world chooses the last, and it is idle to complain that the result is selfishness, meanness, and iniquity, such as this Indian Empire of ours has never heretofore witnessed in the days of the Nabobs.

There was an old saying of the time of our grandfathers that men went to India to make their fortunes and to lose their lives. Neither was the Nabob a loveable character; still he had the one redeeming virtue of generosity. If he was choleric he was not parsimonious. If he thrashed the "niggers" he scorned to humbag them. And he hated shams as much as Sir George Campbell does. His morality was not good, rather the reverse, and vet it will bear a not unfavourable comparison with the unctuous hypocrisy of our own times. The Nabob was evil enough to form connections with the native women unhallowed by the blessings of the Church, but he did not make it the business of his life out of office hours to strive and seduce his friend's wife. He was honest enough to take care of "the connection," and to provide for her offspring. He did not throw the unfortunate victim of his art on the streets, or make some filthy public trial out of her weakness. There are fashions in these things, and the Nabob had not the worst of them. More than all, he was no hypocrite even in his vices; and if he got drunk on arrack punch he drank in company, and was not the secret soaker but pharasaical contemner of strong waters so common in these times. The Nabob, indeed, was the product of a manly policy of rule in India; his descendant of these latter days is the out-turn of sham and lacquer administration, pretending one thing, doing another, and as subservient to Mammon as the very Brahmins and Marwarees of the country ...

When there was more vigour in India and less lacquer, the European here was a nobler man. He had not his mouth full of fraternity, truly, but he was sincere. How far his present insincerity is due to the administrative th ory of levelling him down to the Native it is useless to inquire; it is enough that the insincerity is so patent as to be observed, as before said, in every section of the Anglo-Indian community. High and low, small and great. all look to money as the great object of life here, and not one in a hundred is sincere enough to say that he is worshipping his own particular Mammondevil and nothing else. One man says that he is here as a statesman to serve his country, and to do his duty by the people, and he goes and lives in Capuan Simla to make good his words. Another calls himself an Apostle of Christ and lives altogether in station society, with the heathens, for all the cares. going to the devil around him. A third comes to India for his health, a fourth to realise a modest competence on the most strictly honorable principles, and nobody comes to India to get married, although there are many women in the country. Truth, aghast, has retired to the bottom of the conventional Indian bowry, and the great fetish Sham reigns rampant at our-feasts, our councils, and in our very forms of religious worship. Perhaps one of the most curious instances of this authority of sham over reality, of fiction over fact, is one to which we have already alluded-Sir George Campbell's repudiation of shams. This is because Sir George is in England, and on longer an Indian, and an official Indian. We do not impute wilful misconception to Sir George Campbell, who was an honest man after his kind, but rather selfblindness. He did not know, when he was Lieutenant-Governor of Bengal, and hating shams, that he was a sham himself by virtue of his position and his policy-perhaps the greatest of all. His heart, as we see he now confesses, was with ideas of absolute Government for India or the rule of the Mogul, while his preachings were all in favour of that political millennium when the Brahmin will lie down with the Briton, and the native woman with the lady of fashion. When Governors and Councillors of India deceive themselves, smaller men may follow, and the principle is the same whether self-deception takes the shape of self-interest or the interests of the many. The Indian air is heavy with hypocrisy, public and private and there are times when one might imagine it better the storm that threatens to burst at once than to continue to hang over the land pregnant with uncertainties. Not, indeed, that this last is a good word for what threatens; certainties would be better. There was never a nation, a kingdom, or a power yet, which gave itself up to theories without having cause in the end to repent it sorely; and what are Indian political theories mostly but deceptions? There was never a nation that fell into effeminate and luxurious ways but lived to regret it. There are the English in India disguiting everything, concealing everything, putting false faces on ugly facts, leaving for Mamon, and behaving publicly and privately more or less orientally, and yet they expect no tempest to come of it all, no national calamity to avenge the falseness of their life. We are not, we hope, prophets of evil, like Mr. Lowe; but, if history is not fiction, we must believe that the life, political and private, Englishmen live now in this country will have its own Nemesis. Perhaps the ideas here expressed may be deemed exaggerated, and unnecessary, as they will certainly be considered unpleasant; however, the reader has only to turn to the preface to the London edition of the "Black Pamphlet" to see them, in effect, reproduced there. We are, the pamphleteer seems to say, living politically, if not privately, like the people before the Deluge, and lo! the flood came and swamped them all. Truth-tellers are called ravens and prophets of evil in this very self-confident age we live in, and men and women think they are safe so long as they make things pleasant for themselves; but the truth is that this philosophy is false, and though we all to-day pretend to be so virtuous we have much to learn even from such a character as the evil-living, choleric, and liverless Nabob. Even when people touch Indian affairs they seem to become infected with the Indian malady of shams

What could have been a greater sham than Mr Disraeli's attempt in the House of Commons to justify hi determination to make the Queen an Empress at the expense of the Princes and people of India

We regret exceedingly that the sham was not mor thoroughly exposed. Mr. Gladstone asked again and agi ", but in vain, for the evidence of the statement that the "princes and nations" of India were anxious that the Queen should assume the title of Empress. The sham triumphed; and as it did so, it gave an ominous hint of what will be the pretentious and debasing character of the career of Cæsarism upon which apparently the Government of India is now about to enter.

ACKNOWLEDGMENTS. SUBSCRIPTIONS.

	Rs.	As.	P
Kessuvram Umbaram Esq., Bombay	5	0	0
	. 2	8	0
	. 5	0	0
	. 5		0
N. Dayabhoy Naik Esq., Surat	. 5	0	0
Chintaman Kashinath Esqr., Mallgaon, Nasick	. 2	8	0
Keshau Balkrishna Patavardan Esq., Nagpur	. 5	0	0
Secry. Native General Library, Bhuvawl	. 5	0	0
M. S. Mootooswamy Naido Tripatar, Salem Dist.	5	0	0
Bhaskur Sadashib Panawalkur Esq. Bombay	. 5	0	0
Narayan Pandooram Esq. Poona	5	0	3

Ananda Chatteree's Lane, Bagbazar, Cal

মহিষ্মারির রাস্ত। সহত্রে ভারত সংস্থারক যথন णाभार्षत कथात अजिगाम कर्वन, जथन जाभार्षत मान्प र रा (य, रा ज जामा (पत जम रहेश हिल। किन्छ नातू इति भाम मः खत शेखं थानि यमि मण्यादक मण्या-मह शर्ष कर्त्रम जाङा इडेट्न (गांध इत्र जिन जाङात जून क्षीकात किहिट्यम। इहिमाम यात् अ (म्ल्यह यहभा এक জন তাতি প্রধান লোক। মহিষম রির রাত্ত সম্বান্ধ किनि यादा रत्लम कादा कामाप्ति व मश्याद्या छे छ. (यव हे - भागा कवा छ जिछ।

भक्षन भिन्निशानि । जाइन विधिवक इहे-स्डि। जामार्पत्र विश्वाम देशात द्वात प्रात्म व जिल्ह इन्द्र। भक्षलनामीत। इन्त প্রতিনাদনা করিয়া वर्छना कर्न्स छावरङ्ग क्रियार्डिन अवश् जाभ प्रत ख्य इइंट्डि:इ शार्ड जास्त्रा अई भारिशत नि मछ कान एक-ज्त मुख थांख इहे।

वावञ्चाभक मजा ब मञ्चि छ ई जन व्यन (यचत नियुक्त इहेश (इन। वावू जगमानत्मत छात्न (७ यू जी श्रामा थाका निष्ठ ना हे खितित निष्ठ माह्य।

शंज कला मन्नाव मगरा जांगादमं रूजन शार्व - जनारतन लर्फ निरोग किनकार (१) किशा किन।

क र्शनी।

मार्वाकलि (७ थूरि किमिमनादवव आकिः न এक खन निकिन नाका छ ए देव आ द्या अन । (वन भारत ३०२ इहेटल १७२। जाः कश्मिनन त A, W, Paul मार्ट्रदर निक्छे जार्व मन कर्त्रि इहेर्व।

युविनिन्शियादन कल्लकछेबिएछ एम भारतव जना এক জন ফ ফ টে গ্রেড কাননগুর প্রয়োজন। বেতন ao हेकि। W, Wavell मार्ट्य निकडे जार्यमन क्बिएक इक्ट्रा

२८ शद्रां शत (ममन् म জ जित्र वाकिः म जित्र जन (इफ क्रांक्त था आक्रम। यामिक (वजन 90 है।का। A, T, Miclean मार्ट्यद निक्छे जार्यमन क्रिट्ड SECAL THE PROPERTY OF THE PARTY OF THE PARTY

ভাগানপুর ডিনিটুকট রোড ওরাকের নিমিত্ত धक জन अञ्चावनितादिव मवकाव। मागिक (वजन मामञ পাথের ৬০ টাকা। V, Taylor माट्ह्বের निक्छे जा!-विषय क्रिंडिं इडेर्टा

(वङ्गान गवर्ग यत्ने ब्र जारम्भ ।

कर्णल वार्थ यं फिन छूं गैरंड जारू पश्चि था किर्वन তত দিন জলপাইগুড়ির ডেঃ কমিদনার মেজর মনি मार्ट्य पत्र जाना (छ: डे। मार्ग जार्त्र कार्या कि ब्रिटान। यः भारतत जारे वे माजिए देवे जानी मार्व जन-

পাইগুড়ির ডেঃ কমিশনার হইলেন।

क्षेट्रलग।

द्रायशूद शारित जा । या। वालिंग मार्थ्य मूत्रिम् -वाम मनत (स्मित्न वमनी इहेटनन।

মুবসিদাবাদের তাঃ মাঃ গোইল দাহেব রাম-शूत्रश्रां - वमनी इंडेटलन।

शोशान त्म ब जाः याः शमरकः ज मार्ट्य कुछ न शर्व वमली इहेटलन।

गान जृ: मत जा जर्ग ज त्या निम्म श्रुत गत जिनिमा नत (७३ मार मारकिछ मारङक शोशानिक वननी इहेलन। क्तिम्थ्द्रत एडः गः वातू भट्या ठला एमन शाति-

मन भूत वमली इइटलन। निम लिथिंड जारे हो मा जिए हो हो ते था था बा नी उ छेन्रीज इइटलन:-माग्रालम मार्घ, शमरकार्ड मार्घ 1972 कर्निम मार्ड्य।

निम्न लिथिङ कन्म होत्री तान प्रिकीत (अनी ब छाईके याः इहेटलनः - छहेः किन्म मार्ह्न, स्क्रिन मार्ह्न, छ निडेंडे मारङ्ग।

वातू जिछना अमा न्यू वि नम्हात अकरी सून्रम क इक्टनन ।

मःवाम

— ञ्लोबा मत अथारन (यक्तर्थ शत्रमा श्रामा श्रामा अ षीत्र (महे क्षा (मणे नामक शक का जाराव मूमा श्राह-लिङ जार्ड । मिश्हरलद शंवर्गराधेव मन्भ्रिङ ७० लक ভাষার সেণ্টের প্রয়োজন হয় এবং উহা কলিকাতার है। कनां ना श सुप्राक्षिक कहें (ज्हा

— मन्भ िं भवर्ष (जन्भद्र वां जां जां जिन् किया हिन (य, यिकात मार्रा थियानि मरिमर्ग (थलां ज तार्का शंपन कर्-(तम वतः তथ। इहेट इहे महम छ छ त वकी काकि-लात প্রছরী ছইয়া বোলনপাদে গ্রমন করিবেন। এ পर्य ख (वालनभारमत त्रक्षनार्यकः, नत जात देशलिन शनविषयि (थलाए जत थांत छेशत कर्शन कर्त्रन। थां। निश्मिलकर्भ वाभगत कर्लगा कर्म ममाधा कतिर्जन न्। (वाननशाम इहेट य मगूम्य व निक मण्याम्य शन्ता कर्त्रिक, जाशाप्ति शना प्रवा मन्त्रा कर्न् क लु छेड इहेड। शार्श मण्डे अकाल अहे श्रा दक्कात ভার নিজ হত্তে গ্রহণ করিতেছেন। উত্তর ও প্রিভেম मीया पिशा जावजवार्य छात्वर्भत य मयूम्य पात जार्ड তारांत्र অत्वक छिलित तकांत्र छात देशलिय श्वर्गायर्थ ञ्या (मनौरा त्रांकात छेशत जर्भन कतिरा (इन अवर इंड्रांत निमिन विधिन भवर्षिण इहेट धहे मात्रक्क बाकावा वर्थ छाछ इन। श्वर्णया द्वाध इव पथन यङ দূর সম্ভব এই দ্বার গুলি নিজ তত্যবধানে রক্ষ क्तिर्वम।

জেনারেল বিধিবদ্ধ করেন তাহার বিপক্ষে বোষাই কিন্তু মন্ত্রি তাহার আবেদনের প্রতি কর্ণণাত করেন शर्विषणे जाशिक करत्रन, वानाई हाईकाई इहात नाई। मन्त्रित छाहात প্रक्रि পড়ে এই निभिन्न जिन श्राञ्चित्रां कर्त्रन, त्यांश्राहेर्श्रत श्राथांन २ ममून्य ल्लाक श्रान क्ष्रित क्रित्रन एक्ष्रत व्यापन व्या इंश्रं श्राञ्चित्रीम कर्त्रम, किस्तु मर्ज वर्ष व क अन्न । वक्रों। क्रांका आंश्राष्ट्र कर्त्र। जांश्राष्ट्र भिष्ठाम अनि कल्लक् छेत्र मार्ट्स्व दिर्पार्टित छेपत निर्द्धत कतित्र। जिल्ल मा। मालांद छ १ हेराक वाणां छ वस्मी कतित्र। এই जाईनिही विधिनक कतिलन। (वादाईनामीता अहे ण। इत्यत था जिनाम करिया। (छिष्ठे तम किष्ठे तित मिक्षे व्यादिष्मन क्रित्रिन मश्कल्ला क्रियां (इन।

— जात्नदक्र विश्वाम (य. विश्वाद विश्वा স্থাপিত হইয়াচে তাহার অধিকাংশ ইংরাজদিগের অংথ র সাহাযো এবং এই রূপ বিশ্বাস দারা এই অনিষ্ট इन्टिट् या, भावनीयिक विलिट्डिक्न अने यञ्ज अलि द्वारा क्तिवल कङ्क छलि इंश्तब्ब काव्रदावीत छेलकात इंहे (७८५ माज, ভাবতবর্ষগদীদি: গর কোন রূপ উপকার इই-তেছে ना। किन्छ (वाश्वाई शि.क है निश्वार्ष्ठन (य, या श्रां जारवन रय हेश्लर छत जार्थत जाता (वाशाह कल श्रां शिं इहेश (इ जो हा (मंत्र मन्श न दूःन। (तो श्रा-इरात अधिकांश्या नजुननतान कल अ (मनी ग्रिमिट्राप्त करर्थत दात्रा छ। शिक, इंद्राक्रिन:श कि काला कर्य इंशांट निर्शाक्षिक इंशांट्या ध क त्लंब थां स अग्रम श कार्ना ध (मभौग्रता निकां इक तन। जात्नक कल अ(मभी-(शब्ध निक्व । इ कर्रबन এवर जारनक ऋरन ममून श कल छनि मिनीय्यित उन्निथारन यक्ति इहेयारह । जहे সমুদয় কার্যা নির্বাহের নিমিত্ত যে সমুদয় বোর্ড অব ডাইরেকটর আছে তাহার মেম্বরগণ প্রায়ই এদে-भीता। इंश्राप्तत मर्था (कवल दुई धक जन इंश्राफ जार्ड्न। शृर्व जार्निक कल इंश्रांक इक्षिनियां व हाला-इंटिन। इंइ। दिन अश्या छ किया क्य इंइटिट् । अथन ध (मणवामी व अरगरक कल ठाला हेट जिथिशाएइन। कशना धवर यञ्च धरे प्रति क्रिनिम (कवन जाग्र इरेट व्यानिए इत, व्यात ममूनत (वाश्वाहेवामीता व्यापना वार्थनि निखाइ कर्त्रन।

— इंजि म(धा द्रांके) इय (य, किनाया अम्। के आंतनक-दिन थां व माम् । जा मामत्न व । व श्वत श्वत श्वत व । कित्रिश जाशनि मिश्हामन श्रांत्र जाश कित्राण्ड्न।

वरे मसाम खनिया रेडे द्वार भ्रत मर्था ख्वानक व्याख्य डेशिश्डि इश । इंडेएताएश (य ममूनत त्रांकाता जारहन তাহ'দের কেবল মাত্র যা কে কবে কি সু যাগে অপর্ অপদস্থ কি রাজ চাত করিবেন। আজ কাল তাহা-मित भर्म कर्म मगूमश अहै। इशिष्त माभा किना उ श्रीका मर्वात्रका श्रवन, जावात देश्शकिन्शत म ए निश्वांग एवं, क ने गांत म छ। शांप त विवाम वाधि-वांत जांत विलम्न गांहै। यू बतांश (य धहे तां में) इहेल (य क ना मग्रे मिश्शमन পরি ভাগা করিয়া নিজ পুতের ङ (ख त ! जा अर्थ । क ति त्रा एक न, आ त अर्थ न म क दल म भ कि ज इहेश छ होन। (कह (कह इह इह इलिश व्यापन। मिशक माख्रमा का बन (य. ममाएँ व कान क्रथ भीड़। इहे-शार्ह अहे निभिन्न जिनि किছू मिरनत निभिन्न तांक कार्या इडेएड जावस्ड इडेए.नम। जावात एक इ इ जा जा जा मिकां उ कर्तन। इंडिंड शृत्व कि नेश ममारिव छे भव कार्ग्यभीत व्यक्तिंग व्याधिभंग किला वश्न किला मग्री का लिन खिंड निर्मा मम्ब इहेश हिन जर् का अ अ अ विषय । अ विषय विषय विषय विषय । अ विषय विषय विषय विषय । अ विषय উদোগ করিতেছেন।

— शहेखावाम इहेट निम्नलिथि मद्यानि धिका निष्ठ इडेशाएछ। धक मिन मात्र मालांत छ भक्ते द्वाहरण ज्यन किति एक इंकि मर्पा अक जन मूमलमान कांश्राक नका कित्रा अकि ि शिखन हुए। मानात जिल्ब (म वनी इइटल (मथ याग्र (य, जाइ। इ इ एख धक थानि मत्थां खार्ड। मानात कर शिखन हिं। जात्री জিজাসা করায় দে বলিল যে, তাহার প্রতি অতিশয় जितिहात इडेगाएड। धारे जितिहात श्रीकितिशादनत — विश्वां दे त्रांक्य मध्कां ख वाइनी श्वर्व निमित्र मित्र हात्रि वात् त्रांक मत्वाद वाद मित्र कित्राहरू, রাখিরাচেন।

— जिलिशं ज नाम क अकि (ब्रन्छ श्रं शंवर्गस्टे अह ज করিতেছেন ! এই রেলওয়েটী প্রস্তুত হইলে কলিবাতা इडेएड (व श्वाडे 800 माडेल माख वावधान इडेएव। वर्डे लोइवर्ड घाडा द्रांगशूत अनाराशृत मश्युक इहेटव अवश देश ममनशूत अकढेक मिश्रा किलका जाश शंभन किरिट्य।

—माद विठार्ड (छेन्थान जाशांगी २०१ जार्वाश्व मत्या कलिकां अदिजाश किर्या मायिकिलिंश शंभन किर्नि

— ডা क्वांत छ जिन ठक वर्जी व अक श्रुव जकम एका र्छ का इसे कल्ला जा शावन कवि । आकृ जिक विक्वारन देनि छ एउ दिनिश প्राथ इदेश एइन।

— शवर्षाय विकाशन वावा श्रकाश किवशा हिन (य. जारामो ३৮११ भ ३ जात्म ८४००० इंकिर्त मिक्क त्कव अधिक आंकिः िक्तं कि ब्रिनिम न।

— योखा एक द करनक मिशाहि मन वरमदबब धकि वालिकात প্রতি কুব্যবহার করিবার চেন্ট। করে। এই निभिन्न जाशांत्र मार्रातक विष्ठांत्र इहेर्ड्ड्।

— जामात्मत जुङ भूर्म श्वर्व (जनाद्व (जनाद (जार्थ शूब युनक लर्फ (म:स। এक न शत्रात मश्कु। स मक म मास निश् इरेग्राइन। लड खाडेठ डाइम्ब नात्म रेशरे व लग्रा नालिশ कित्रिशाट्य (य, जिनि त्लाडो जाडेठ क या छ-ठा तिनी कि तिशा एक्न । अहे मक फ माग अ कि भ म नृना श कुৎिमिৎ दिनश वाश्रित इहेशा शिष्याहि (य. जाहा পতিকার প্রকাশ করা যাইতে পারে না।

— जांक कान शंकानन डिप्रेंग्नित गांग डिशावान वाल्कि অতি कम (मधा यात्र। मन इत त्रां अत्तत भेज निव होंग धक छन अधान कांत्रन। शंवर्गिय हे हारक ' बाब वाराष्ट्र ' अ' जागारी व' मिता मुक्त हे रून नार, मन्त्र ज इंशांक वाद्या श्वात होका श्वत्यात नियः एक ।

— गुरुष পां बका वटननः — भग्रमनिश थिए । छोत्र कम्भानित महिङ बाम (माकात्नत करिनक वाम जाजात कड़ेश। धकड़ी (याकन्या डेशब्रिड किन। डेश (म निन अत्याभा काइले मा किए दे हे पाः ध्या मार्ट्यत विहादत जिन्मिन इड्लाइ। (याकन्या धक्री माराज कथ. ल देशा छे शिष्ठ इश । — शिर्शिष क म्भानि ना छ। भाना स्म ज्वा क कि विशेष विशेष व कि कि विशेष জिनिन भव जांडा करिया वानिया हिट.न। भारत कार्या (भय इक्टल वाक माकारनत करिनक वाक कार्या-वब्रमा চब्रग मबकारबब निक्छे शिवा চाड्ड क्वार्ड डाइ। णां जिति जिति विदिष्ठ ने गां भागति जात वातू वालन (य ' এज क र्ज !! व (य (म श यूठात ।' वाका जाजात थं ज वहे श्रिङ अकृति इद्दा याज, তিনি আপনাকে অত্যন্ত व्यथमानिङ (वाध कर्त्रमः, এवर व्यक्तिएषु रे वत्रम। वावृत विकास क्लोकमाबिएक नालिम कर्त्रन। পाठक मिश्रारक वात विलिट इंडेरव ना, या अहे याकमगाँ इंडे ठांत कथांत প्रवे फिनांमन इइया शियां ছে। " मूठांत " नेद्जत তাৰ্থ কি ?

– ষ হারা নাটকাভিনয় করেন ভাহারা প্রায় সর্বতিই धक धत्रानेत (लाक। जामता जाविजाम (य, हेश्दाक्रमित थिए। छेत्र मकल जार्थिकांक छे ९क्किकार्थ ठालि इ इसा थारक, किन्छ मन्भा जि लूरेम मार्ट्य वाश्वारेख (यक्षी बक्कृ जा करत्रन जाशां (ज ताथ श्र या, हेश्यक्र प्र मार्थां ज ना हेका जित्न ज्ञान उठ माधु हित्र (ज्ञाक नन। लू म मार्ड्यक (वाध इंग्र जात्मक जात्मन। इनि लाश जमानिध थिए तिष्ठो ति इत कार्या कि तिशा जा निष्ठ हिन । किनकां जाय इश्रं वकती, जश्रव नाताना जाइ এवर लुइम मार्ट्य ७ जांदात खी मिरमम लूहरमत অভিনয় দেখিয় মোহিত ন হইয়াছেন বোধ হয় এমন लाक जिं जिल्ला जार्ड्न। कर्यक्रमान इहेल इनि लाञ्चा रे शमन कर्त्रन। तमश्रात्म जिनि जाजनम था-मर्भन कत्राहेश अत्नक्टक (माहिङ क्ट्रान। विन्छ जोहांब मलक् वाकित्मिव मः धा जात्नरक्व हिं ज ज कि मन्म क्रेश ऐटि (य, जि.न जिश्त मल जिल्ला किला वाधा इडेग्नाएडन। (लाय व्यञ्जनत्यव मिन जिनि मर्गक-मित्रांत निक्छे अहे जाश बङ्डा करत्न। धांत्र ७७ बल्मत इडेल जामि शिर्मि दित्र मत्न एर्विंग क्रि शाङ्घ। (महे व्यवशि वािम शृशियोत मर्सव व्यमन किति-अ। इ। व्यामि वर्शवर मन्। नित्र महिङ कार्श किशो वागिशाहि। जाभाद (कवल भाव अहे हिन्छ। किटम जाभाद मन्य (लां कि द्रा मक द्वा शांकित्व। किन्छ भ रे वांत्र आमि ठिकिशाहि। जागात्र जभीत्म (य मकल खी ७ श्रुक्ष व्याट्ड जाराटमत्र ठ्रिज (मिथ्रं भागि जाराक इडेग्नाहि এवर जावालाय घुनाय मि इंड जामि जामात मल जम किति जिथा अध्या अध्या जिथा जामि इंशिए प्र प्रतिब সংশোধনের বিশুর যত্ন করিয়াছি কিন্তু তাহার ফল এই माँ ए। इशे (य, इश्ता मकल्लिई आभाग श्रम लेकू इरेब्राइ। शङ माङ माम शरील जाशि धरे मल लरेब्रा कार्या कतिएक् धवर धरे माज मारमत मर्या लांच कत्रा मृत्त थाक्क वत्र आभात विष हाजात छाका जाक-मान इइ शारह।

— आश्वामानिशादक এक वा जिल्लिशाद्य प्राप्त জেলার কোন গ্রামে একটি জীলোক এককালে চারিটি मलान शमत करिय्याट्य। ठाःत्र मित्न ठाः ति मलान क्रिक इग्र। खीलाकिए कछा कछ भाग । धमन कि অনেকে তাহার জীবন নম্ট হইবে এরপ আশঙ্কা করিয়া ছिলেन। इট সন্তান সম্পর্ণ অবয়ব বিশিষ্ট হইয়াছে। जात प्रकृति जल প্राजात्मत किष्ट्र जलाव जार्हा अकिति ज्ञामति ठक्कू मारे अवश् वाम शरखन जानि अक अकारित अवश् अक जाति अकार्मिक रहेरिक । খানি চামড়া ঝুলিতেছে। আর একটির পাদৰয়ের ইহার কিছু মাত পরিবর্ত্তন হয় নাই। এই গেজেটের विक्रंड व्यवस्थ वर कर्षत्र शतिवर्ष्ड किवल माज इति नम शांजा। প্राज्ञ या वे देश मीर्घ । क्रिस व्याद्य। गिर्दिष मञ्चान की विक व्याद्य किछ | शतिमतं। इंशत व्यावतालत वर्ण इतिसा। এই व्याव-বিকলাদ হুটি সন্তান যে অধিক কাল জীবিত থাকে এ রণের উপর ইহার নাম অঙ্কিত আছে। চিন দেশের क्रम द्रमध इत्र न. 1

— हिन्पू हिटे जिथि । वटलम, माठा छ नशदत निक छ हि । ९ वक्री वाविद्धि या इडेशाट्ड। इशाश्माछ नारम वक्षी था-शाए अकक्षन (लाक ज्ञमन क्रिट्र शिया (मर्थ ज्थाय वाषी প্রস্তুত করিবার ভালহ প্রস্তুর বিস্তর রহিয়াছে। তৎ-পরে কতক গুলি লোক গিয়া প্রস্তর সংগ্রহ করিতে वात्रिष्ठ कर्त्र, धमन ममर्ग धक त्र इ थ श्रेष्ठ शिष्ठ । मकरल मजक जात म इंज ज्यामत इरेश अक्षी त्रर् शक्तत (म चिट्ड लाता । छेशत मधा मिता शमन कि ब्रिट्ड श এक ही व्यक्ति व्यक्ति व्यक्ति व्यक्ति । जि কারক থিয়েটার কোম্পানির মানেজার জীযুক্ত বাবু অট্টালিকার মধ্যে নানা প্রকার ধাতু পাত্র ও গৃহ সজ্জার জिनिষ রহিয়াছে। এক স্থানে একটা বিচিত্র কাফকার্য্য शिक्ठिक शर्क निर्मिष्ठ कि किन त्र इत्र एह। उष् छ जानि क जरूगान करत्रन हिन मम्। हिता (लिया वर्षाय अहे शार्थाएं আর্বাসয়া বাস করিতেন। অবর এক স্থানে একটা কফিন পাওরা যায়, তাহাতে যাহা লিখিত আছে তৃষ্টে जाना यात्र डेश डिन शकात ८९ मरतत थाहीन।

— किছू मिन इइल ভারতবর্ষীয় গাবর্ণমেণ্ট কতকগুলি त्र इ पृत्र वैका यञ्ज विला । इ इ ए जान त्र न करतन। इ इ ए ज विखब वाब भए । कड़की कि छै । भा वाक्षा कान डेशयुक्क स्थात अहे अल तकिक इहेवात कथा थाएक। दिख यञ्ज छ न किनका जात्र (भी ছिल (मर्थ। यात्र (य তাহাতে কোন কার্যাই হইবে না। এক । উহা সমুদায় जकर्मणा इइया পড়िया जां ছে। श्वर्गमणे य के ज क्रिय कड अशंवाय कर्त्रम डांश्रंत देश छां ।

—मञ्जि इश्निएअत এक ही योज प्राप्ता आपालिए (भालिम এक णै खीलांकरक जालान एन। गाजिए छे छे তাহার নাম জিজ্ঞাসা করায় সে বলে যে, আমার নাম (म वर्षेन। (পानिम कर्ड्क এই ख्रीलाक है। शूर्व অ নেকবার ধত হয় এবং যত বার ধৃত হইয়াছে সে তত বার আপনার একং ভূতন নাম বলিয়াছে। তাহার यकर्क्या डिठित्न डिटिकेडिव (পानिम আमियां এका-হার দেন যে,গত ৮ বৎসর অবধি তিনি তাহাকে জানেন। এक मगत देशत अवस्थ भूव जान जिल। এक जन মারকুইদ ইহাকে বিবাহ করেন। ইহার স্বামীর মৃত্যু হইয়াছে। স্বামীর মৃত্যুর পর এ তাহার কোচম্যানকে বিবাহ করে এবং মদ্যপান প্রভৃতি দারা আপনার वर्थ विनाम करत। क्राय (कांच्या दिन मात्रा-याति वात्र इश, এই क्रिंग मिनर विश्व प्रकर्ण वामक रम्र এवः এখন वक्त प्रकर्मी रहेमा डेठियाए । इंडि यक्षा ञातकवात এই खीलाक है इक्ष्यंत नियंख রাজ দ্বারে উপনীত হয়, কিন্ত পূর্ষে ইহার অবস্থা ভাল ছিল এবং এ এক জন मञ्जा ख (ला कित स्त्री এই थां जित्त देशत विकास (क्र (क्रांन सकर्ममा होलां स ना। वर्ज्यान यकर्मयात्र या जिट्डें मार्ट्व जार्शक कर्ठिन পরিশ্রমের मঙ্গে ছয় মাদ কারাবাদের আজ্ঞা थिमान करत्न।

—যে বন্ত্র বয়নের যন্ত্রে ৬০ হাজার চরকা এবং এক হাজার তাঁত খাটে এ রূপ একটা যন্ত্র ভারতবর্ষে স্থাপন कतिए (भारत २० लक्क छै। का वास इस। इंश्नाए धई क्रथ यञ्ज देशा अ अर्फिक छोका य मः श्राथित इहेट थाता। এত खिन इंशांट इंश्लंख ः शका जनगाना नाना कात्रान >२००० छोको অधिक वाय পড़ে, उथा जात्र वाय দिनर कार्शाएकत कल्लित मश्था त्रिक इटेटिए । ३৮१०-१३ थुः व्यक्त अ (मर्ल ३३) कल छिल अवर १४ थः অব্দে কলের मংখ্যা ४२ ही इहेशा ছে।

— किन माखाका इहेट गंवर्गयने भिक्ति का श्रि अक थानि রাজকীয় সাময়িক পত্র নিয়মিতরূপে প্রকাশিত इहेशा थारक। अथानि महस्र वरमात्रत अधिक मिन इहेट थका निष्ठ इहेट एए धवः धहे महस वः मत हैश জন मः थन। ६३८ लक्ष (लाक। इशापत निमिज (करल । इस।

এই এক খণ্ড मशाम পতা মাত প্ৰকাশিত হয়। ইহা আবার রাজ কর্মচারী ভিন্ন আর কেহ প্রাপ্ত হন

—গোথা নামক ফারাশি পঞ্জকা হইতে নিম্নের मचाम छिन छेक छ इहेल। कालम (वांगान कांशिल-(कत मश्था। २३० लक, (व्या हिसालि त मश्था। ६ लक, ইত্দির সংখ্যা ৪৯ হাজার। ৮২ হাজার ফারাশিরা প্রকাশারপে কোন ধর্মই মানে না। ফান্সে এখন युक्त आंतु छ इहेल नृजन यि नियम इहेया एक, जमञ्माद १८२०३७८ জন योक्षा युक्त किटा डेशिव्डिड इहेट शास्त्र। ১৮৭० थः অব্দের যুক্তে কান্সের ৩৮৯ কোটী টাকা वाय পড়ে। এখানে বংসর রাজ শাসনের নিমিত ১०० (का जी जीका वाग्र इय्र। का का २७ हा जात हे हता ज এবং ৩৫ হাজার জর্মেনীয় অবস্থিতি করেন।

— यमा भारोि मिर्गाक यमा ছाড़ात्म्य এक जै मञ्भाग वाहित इहेशा (ए। (य मूल स्टा (हामि अपिशी किकि॰मा र्य, अणी (महे व्यनानी एक मां गु खर हेग्ना एक। याहादा माठ न তাহারা নিয়মিত যে পরিমাণে সুরাপান করে তাহ র অভিরিক্ত পরিমাণে যদি তাহাদিগকে সুরাপান করা यांत्र, जाशा श्रहिल जाशाता यम পরিত্যাপ করে। किगादा नामक मदाम পত्र ममाभान निवाद । এই मञ्थाशि প্রকাশিত হইয়াছে। ফিগারো লিখিয়া-ছেন (य, মन्। ছাড়ানের এই একটি অতি স্থন্র উপার। नत् अद्य ७ स्ट्रिंग गवर्ग यन् यन् यन् या श्री मिगरक अद् उभारत मछ धामान करतन। य मूछर्ड इहेट ममाभाषी মাতলামির অপরাধে ধৃত হয়, দেই মুক্র হইতে তাহাকে আর কোন আহারীয় প্রদান কর। হয় না। मिना बाजि जाशांक (कर्न भग अ क्री अमान করা হয়। রুটী যে প্রদান করা হয় সেও মদে ভিজা-ইয়া। প্রথম দিন স্থরাপায়ী হর্ষের সঙ্গে আহার ও পান করে, দ্বিতীয় দিনে ইহা আর তাহার নিকট তত डेशीएमয় विलिया (वाश इয় न। এবং দिন १ ইহার উপর তাহার ঘৃণার উদয় হইতে থাকে। তাহার প্র यर्पत छे भेत जा शांत এই क्रभ श्रांत छे पत्र इत (य, ए. উহা দেখিলে **वम्म क**रत। এই উপায়ে বিশুর লোক यमा পরিত্যাগ করিয়াছে। এ দেশের বিখ্যাত মাতা-(लंडा रंग ७ वर मधानि भाठ कित्रा विलियन एक, नव ७ एस अहर एए तत यमा भाषीता भाषि या जान। यदम श्रुणी याश्रांत श्रा (म আবার স্থ্রাদেবীর (কমন ভক্ত? —श्थिवीरङ ১०००,०००,००० लारकत वम् । इश्त

म(था ७१०००००० (लाक कार्राक कि खना (कान लिখि) वात डेशकहर्वत वावशत जात ना। यजनीय. জাতিতে ৫০০,০০০,০০০ লোক আছে। ইহারা রুক্ষ ১०००००० (लां कि कां के कलक लिएथ। भारतमा, शिल्मी, आर्त्याणी, मितिश প্রভৃতি জাতি কার্পাস নির্দিত্ত कार्गक वावश्व करत। अर्थत ममुमय कां कि माथात्रन वाबक्ठ कागंद्र (लथा शंष्ठा कर्ता (लाखाक लगक সংখ্যা দারা বংসর যে কাগজ ব্যবহার হয় তাহার ওজন ১००००० (मत, व्यर्थाः প্রতি ব্যক্তি গড়ে ৬ (मत कतियां कागंक नावशांत करत। गंड ७० वध्मरत्त शृर्व প্রতি ব্যক্তি গড়ে এক সেরের কিছু অধিক কাগজ वावश्व कविछ। এই পঞ্চাশ वश्मदा ইহার পরিমাণ প্রায় তিন গুণ হইয়াছে। এই কাগজ প্রস্তুত করিবার নিমিত্ত ৰৎসর; ৪০০০০০ সের নেকড়া, ১০০০০০০০ সের রেসমি বস্ত্রের নেকড়া, এতব্রিম ञन्गाना ञ्चलक प्रत्वात श्रीक्र इत्र। ०৮०० भाउति यदम कार्गक श्रञ्ज इय। कार्गक्ति क्रांग श्रिन २० श्राकात श्रक्य এवर ১৮००२२ जन खी काज कर्ता। প্রতি বৎসর ১৫২০০০০০ সের পত্র লেখার কাগত ৪৫০০০০০০ সের ছাপাখানার কাগজ, ২০০০০ (मत कागज ग्रह्त প্রাচীর আচ্ছাদন করিবার নিমি এবং ১০০০০০০০ সের কালি তোলা কাগজ প্রস্তুত

– मशाम পত্তের সম্পাদকরা সম্পাদকীয় কর্ম युउ'क श्वार्क निर्मा कर्ति कर्ति शादन, काशान शवर्न-रमछ এই निमिछ निश्म कित्रिश हिन (व, তাহার রাজ্যের माभाविना माम्यल जाहारमंत्र পजिका दिवंदन के दिल शांति:वन। जांत्भितिकांश निश्म जांद्र मन्नांमदक्रां भर्ग्भात विनिम्हत्त्र निभिन्छ (य मश्राम भन् । ध्यात कहत्त्रन जः इत्र मायून लाता ना। इंश्लाख श्रथम (छिं मङ्द्रानी, षिडोग (किंदे शादेभ व्यव लर्फ म, जृडीय (किंदे शादेभ व्यव वः, म जर ठल्थं (स्टेटें मसामः श्वा (य मिट्न यङ मञ्जित ऐन्न इहेट एक मिल्न मन्न भिष्ठ भेन তত মাননীয় হইতেছে। সর্ববিই সম'দ পরের উয়তি (म्था याई एडएड निस् इडीगा डाइडवर्स (कवल ममः म পত্রের অংধাগতি। রাজ পুরুষদিগের যেরূপ যত্ন তাহাতে যদি সম্বাদ পতের গাভাগন্তরিক জীবনী শক্তি না शांकिङ जाङ्गे इहें न वर्जा मन अरम ग इहें जि मयाम श्व উ ঠিয়া যাইত।

— युवद्रा (जन (वन्दि यः अर्थन कथा हिल, किन् गामाद्यादक उला ऐठाव প্রাত্তাব হওয়ায় তিনি তথায় शमन किंद्रिक भोद्रिन नो। किन्छ वाष्ट्रांत्रवाभीत ভাহার আগমন ৩ড কা করিয়া ভাহার সন্মানার্থে महत समङ्गिष्ठ उ आत्माकमग कतिवात ममख जारगा-জन कर्त्र। थक वाङ्कि इंश्रंत निमिख क्षे क्षे क्षे नर्गन निशिख ৫० ছाজার টাকার বিল করিয়াছেন। কিন্তু আ-लारकत राज निकां भार्य (य किमिर्ड नियुक्त इन जार्यता वात्र शांकात होकात द मी मिटल हाहि: ल्डिम न। इंश

कछ। कछ। कछ जामान एक छ शिष्ट्र इहरवन।

— ब्रघुवीत मिश्टबत विषय (वाध इस शांठक गात्वत स्पर्व वार्छ। इति वाशनारक लाख्छ्रात्र ताजा वलिया भिति हा एमन এवर मार्श्तानशूर्द्र अ अ हेर्। कि कृ जिम-क्राल जलदात्र नाम धार्न करा जलता जलताए कार्याकक कर्त्रम। ज्यानिक्त विश्वाम देनि मां छल्तांत वाका अवश माश्रात्नश्रात्र माजिए हे. हेत किए भ श्रां छ इहेता हे होत जिञाया विष्ठांत्र इत नाई। मन्ध्र जिङ्गि (पञ्यानि जामालाउ এक অভিযোগ উপস্থিত করিয়াছেন। মক-म्या এक जन एम गीय यू वा ति जिन जे ज जिन के व इहेर व धनश्यन। याहिष्ठः इनि जा छ छे शयुक्त वा कि छ विश्वक मन ७३ क्रिश (५४) कि ति (७) इ (य, यकम गांवि माक्तिनश्रत्व जर्जव प्रांता रिकात क्या ध्वे जज त्रशूबीत मिश्हरक क. हे.क मिन, ग्रूडतांश जिनि य जाहांत्र मकम म। विष्ठांत कतात्र छेशयुक शाब नन जार। महर्ष जानू जव कर्। या इंटिज शादि । मकक मः (मनीय अवत-छित्वि জ জের निक्रे इछग्राई जार्गात्व मावास इई-शांहि। खना याहे (ज्ञ ला अख्यां व इहे तानी (क माकी यार्थ कर्ता इने शांद्र अन्थ जांदा निगरक कांद्रांती जां मित्रा माका पिटिं इहेर्व।

शांद्ध। তথাকার রেবিনিউ বোর্ড কলেকটর সাহের-मिगारक এই कर्शक ही विषय जारू मञ्जान क्रिशं ज गार्म न कित्रिशाट्डिन। (১) অञ्चाञ्च वरमद्र य श्रिमात्न क्रिम व्यावाम इंहेश। थाएक अवरमत जाहा जालाका कम कि (वनी জिম जारोम इइंग्राइ । (२) कि পরিমাণ শস্ত হাত लाशाम मश्रेशें इरेशांट्य जवर कि পরিমাণ সংগ্-हीं इरेगांत मखांवन। आ(छ। (०) रार्ज्यान मार्यात कि क्रि विष्यु (8) (भ। क्रि थाएमा व वाजाव इहेबाएक किना। (৫) यञ्चा এवर भा छातामित भानीत जित्नित्र अञ्चार इरेग्ना (५) व्यमजीवी (व्यनीत व्याप्त कित्रिक इरेटन।

করিয়। প্রশংস। ভাজন হইয়াছেন । কিন্তু ভাঁহার কিউপকার হইবেনা হইবে এখনও ভাহার নিশ্চয়তা ञातिक काल शृत्वि इंश्लिखं ञातिक लिक खेलि मक्कि (मश्रेशार्छ। कारिश्वन वाहरक्षत्र ग्रांश जिन्धां कि कि के कि कि का कार्या मिला कि का कि कि कि कि कि कि कि कि कि मक्का (मश्रे इंटि शाद्यम नाई। किनि क्रमारां पक-श्कात व्यक्षा व्यक्षकां त्र माहेल शामकार्त भावन क्तिशार्ष्ट्रन। उंक्षित्र शत कछोत्र शाष्ट्रिंशल मार्ट्रव ल ७ न इहे (७ इंतर्क शर्य, ख ১२ वर्षत भगना श्रमन करतन । প্রতোক বারেই তাতি শীঘ্র আদিতে থাকেন। তৎপরে তিনি কাণ্ট গারি হইতে লণ্ডন সেতু পার্যান্ত ১০৯ মাইল ''শীঘ্র আমার উৎক্রম্ট অশ্বের উপযুক্ত মূল্য প্রদান কর मन गिनिटेकम २८ घणी श शमन ७ প्रजा शमन करतन । প्र वर्ष जिलि २२ घणीश 500 मोईल खमन कर्यम। 59४४ श ने । (क त्रिष्ठ मण (काम नाभक श्रादन ए व वर्ष व शक जन (ठिंडी मार्ट्य ए घंडोक्स ३० मिन्द्र स्था ५०० माईन गभन करत्न। २१%२ थ्यो:स ११ वर्ष वर्शक इंडे: छेक मार्टिय ठाति मित्न छुड्लेड याड्ल शयन करतन। एउन्म नामक अक वाङ्कि अ विषए शिथा । जिन ३०० शिन वर्गाङ्ग द्राश्चिश् ३० मिल्स ८०० माइल श्रम कदिशाहि-(लग। ३৮०৮ माला शङ्गार्ग नायक धक छन छप्रलाक ৮ দিলে ৪০০ মাইল গামন করেন, কিন্তু দেই বর্ষের নবে-श्रु भारम (ডार्यालात नामक अकजन १ मिरन ৫०० माईल এবং তিনি করেকটি আলোক প্রদান করিবার মঞ্চের বিায় ছিলেন। কাপ্তেন ছে.ন লগুন ছইতে এক্ সটার পर्याख 38५ माहेल ५ मिन शिशा ছिल्न । हान्ना माशादात का निश् नामक अक जपत्लांक वािमश्मिष्ठांक इरेड जू विल পर्यास २००० माहेल ए मिटनंत करम शिशाहिटलन धवर छत्र-(ठिसोत्र नामक छात्न (हाल्डे नामक क्क क्षक विनःन ७५० माईल शिया ছिल, किन्छ जमत्वित्र श्रद्ध (म (थाए। इहेग्र) याग्र। डिजात हेनः, फिजन नामक श्वारनत्र त्लल्भ् हेना हे श्लिकांक् म घंछात्र २ माइल शिमाद्व २०० घंछ। विना-विवारम शियां हिल्लन। १०८ वर्ष वयक हेमाम शां जिलां द नामक এक वाङ्गि । किन व घड़ित १३ माइन शियाहि-टलन। २५२२ माटल ৫०० शिल वाजि बाधिया मिलिश मार्ट्व প্রভাই ৪० মাইলের হিদাবে ১৮ দিনে ৫৪० মাইল शिशो জशना ७ करतम। जे श्रीका ज निजात म रहत मण दि ि हे कम २८ घनोत्र मध्या २०० माइल शिया हिल्ला । ১৮०८ मारल (वल एवर २०० शिनि वाि आं प्रशंध प्रांत ७৮ माइल शिशा ছिल्लन।

— डेक भ'जिका वटलन, " পात्रमात जा उर्ग ज जात्रधन नामक स्थातित ७०० हेल्मी अञ्चालात अञास करे थाथ इ अव १ एक र कह सूम न भाग धर्म ता कि कि विवादिन मांत्र (यो(जम यनिं कात्र अहे मश्योम हिंहाइटन अ श वालिए नर्ड ए सिंब निक छ (श्रः न कर्त्रन। लर्ड ए सिं = 000 होको मार्था कतिया हिन ।"

— श्राज्ञात त्राज्ञ (मायग करिया। পश-कत जामाय इहे-(उट्ह किन्न डेश कि क्र. ये जाशवात इहेट उट्ह हिन्दू हि.ज-विनी जार्षत्र अकि पृथ्वेष अपने न कित्रशांट्य। टिनि —गाला छ ई जिंक छे पश्चित इहेगांत छे पाक्रम इहे- विलग ३— '' किमिरित वार्ग कितः प नारे इस वाभागा वाष्ठ তাহার করেকটি কথা বলব। আজ প্রায় ২ বৎসর इडेल ঢाकाর পথ-कর কমিটি একটী নদী ও খালাদি काहिवात कल क्यार्थ ৯०म रख होक. (थद्रग कर्त्न। यिनि क्य क्रिलन, जिनि ऐश क्लिकां के निया जा मिर्वन किछ विलम्न इहेट लाशिल। (শ्य मश्य मार्वाम जामिल य (मई कल्लंब कि नश्छे इइग्राष्ट् जाइ। रमद्रामज किवां জন্ম কতক টাকা লাগিকো খেত দেবতার কণায় কোন क्रथ उर्क कित्रगांत्र श्राष्ठान नाई, रूउन कला (मद्राभ 5 ज्यारे वाका वाश ना क्रियारे यथा माधा कछ श्रीकात शृक्षक जार्थ (ध्रेत्रन किविटलन। जनदर्भाष मश्राम তাবস্থা। (৭) জিনিসের বাজার দর। (৮) যদি আসিল কলটা কলিকাতার পৌছ্য়াছে সতা কিন্ত সত্বর রুষ্টি হয় তাহা হইলে লোকের কফ কি পরিমাণ তাহার পুনঃ সংস্কার আগনখ্যক হইয়াছে। কমিটী लाघव इइेट्ड পারে। কলেক্টর সাহেবদের স্বরং পুনরায় অর্থ প্রেরণ করিতে বাধ্য হুইলেন। আবার ভিন্দ আশিক্ষিত স্থান সমুদায় পরিদর্শন করিয়া কতক দিন পরে কি সংবাদ আসেবে বলা যায় না। ্ত হইবে এং অক্তান্ত বিষয়েও তাহাদের বোর্ডে কলটা কলিকাতা হইতে ঢাকায় আদিতে যে আবার ত। ছার কোন বৈকল্য ঘটিবেনা কে বলিতে পারে? — প্রভাকর বলেন, 'সম্পতি ওয়েষ্টন নামক এক জন হয়ত ঢাকায় তাহার সংস্কার না হওয়া প্রয়ত্ত পুনরায়

আঘোরিকান ধাবন জ্রীড়ায় বিশেষ দক্ষতা প্রদর্শন কলিকাতায় প্রেরিত হইবে। কল দ্বারা আমাদের नारे। कि कांत्रर्ग रूजन करलत था इक ना। घरिष्ठ जांत न। (कन किंगि) (वाध इत अविष्यतत आलाइना कता अ युक्तिमञ्ज मत्न कर्त्रन नाई। जात्र এक वात्र এक जन मार्टिव मृग्या किर्दि शिया ছिल्न । এक छै ज्य श्रालब छे व इहेट डाइ। ब अर्थ शिष्या मित्रा यात्र। जिन পথকর ক্ষিতীকে ভয় গুদর্শন পূর্বক বলিলেন যে न एट (प छत्रांनि जामाल ए जिए या कि अव।" कि भिनी वां ७- जां जिं का का वां वां का कि इरे का वां वां (लग। मতा मिथा। नेश्र क्रांतिन, (क्रश्र वलन (निव मार्टिव कि के के के विका मिशा किया है मिया वा तक शिन व्यागदा जाहा विश्वाम कित ना, किन्छ माधादाव अंक थ সংস্থার হওয়া নিতান্ত তুঃখের বিষয়। কমিটির অর্থ यमि ७३ छोट नम्छे ७ वाशिक इरेट थात्क, ज्द পথকর টাকা প্রতি চারি আশা করিয়া গ্রহণকরিতে वादख क्रिलिं चूक्लिं वाना क्रिया यात्र न। जिल्ल এक छ। जान्य मित्रशिष्ठ्ल, य मि (कांन (श्वंड (४१७) जित्रांधान इडेज, ভांडा इडेल कि मिछी कि খुल्न नात्र व्यावक इहेट वन ना ? उथन कि मक्वनान इहे वन। ব'ত্ল্যা

প্রেরিত।

म इसमार्तित तांखा ७ जांतज मः कातक।

कित्रिशिष्ट्रिन यि शृथिगीए इहे जन गाजित धक स्थ श्रक्ति भाउर यूक्ठिन। अकात्रग कार्म कार्मा द्वाता ममख वाक्तित्र मन माः खांच क्रा जमख्य। धवर माम-জिक निराम द्वारा आभाषित्यंत्र श्राम्श्रात्त्र अव अधिकांत्र এ রূপ স্থিনীকত হইয়াছে যে কোন কার্যোর ছার সক-लের সমান উপকার হওয়া সম্ভব নহে। যেমন নদীর धक कुल खता छ इहा। जाना कुल खद्म इहेता। शांदक दमहे क्रिश अरक्त डेशकाद्य जात्नात किছू जनिय घडिया थादक। व्यक्त या शाहारक व्यक्षिक ! १८ मंत्र छे भकात इय मिह कार्या कत जाभामित्रात्र जानमाक। महिष्मातित द्राष्ट्राय घाया अभिकाश्य (लार्कित खेलकात इरेडिड कि ना दिव श जारलां हनां करां कर्षा मश्रम शिखब ष्वांत्रा माधात्रदात्र मङ श्राकां इय वर्षे किन्छ ভात्र उ भश्यां तत्कत (त्राष्ठ: मम मयः क मजामज ध्यकां कता कर त्रभ जार. खुर। (कनना उ९ मद्यक्त उँ: हात ज्वान लाट ज्व वर् अकि । यू वथा नाई । जार ज मश्का तिक म मा মহাশার একবার যাদ ভাল করিয়া রোড সম আইন थानि पृति करद्रम छ। इने इनेल छ। निष्ठ भा तर्यन य জिमिनादित्र (अफ लिंदिन व जिस्क कित्र जिसक निज इन्टेड मिश्र थादिन धवर जाइम (कंत्र जाल्य ग्रम खंडांश मिश्र) श्री कि। अध्यापिकां अशिय माग कारिमां दरं फ लोग किंगिनी व (मस्त जां हिन। जि. धक्छ धे किंगिनी ज जां नुक-मात्र धन्र (জाजमात्र প্রজাগণ আছেন। অত এব রোড (मम किंगित रू इहें त्ल छै। क्मिमा जामिशोब वाब जाना तक्य ये जार व करों इत, बिंकि वाकि शांक यथन महिसमातित त्रांखा (त्रांख: मम क मिछि इहेट जाव-शातिज इहेबाए ज्थन প্রায় বার আনা লেংকের উপকার जीकात कता इइगाएइ, जाविशके छाति जानात मध्या छ।-इंड मश्कांत्रक अक शांचे तक्य यड श्राकां कित्रशांद्वन। ভারত সংস্থারক উল্লেখ করিয়াছেন যে, কেবল দিগাম্বর वावृत महिष्यातित छेशकाद्रत निमिज जे वाखा इहेटज्ह এবং ইহাতে ज्याद्रवर्गद्र कान खेशकांत्र नाहे। ভाরত मং-क्षांत्रक खो तांखांदित घांता कि गमख क्रमात रत्नद देशकांत চান? এই রাস্তার পশ্চিম দীমা অর্জ মাইল এবং পূর্বে দীম, व्याभात ७ जाभात जाश्मी मितात क्यो मात्रीत देशत मित्र। या इटिए । ত। इ। एक वाशि मुक कर्छ दिल्ड शांत्रि (य, देश्त प्रति (कवल ज्यमन वत्नत देशकात स्हेट्ड धमज नाइ, जमीमादित अ अ अहामान वर देशकात जार्छ। जायात जल्लीम त्रिम्दरात म्या क्रिक् क्रि

अ। (इद्दक ख्ट्रांड क्रिशाह्य। अ। भाषाद्रवात छेशका-রর নিমিত্ত অমার ও তাহাদের মূলা লওয়া কর্ত্রা न(इ जाहा जामि स्रोकात करि। किन्छ जामि मुला धाहन कतिव कि न। ए । जदमादिङ नाई। इक्टाइङ जानिएङ পারিবেন যে উক্ত রাস্ভাদারা দিগদার বাবুর উপকার इइंटिड कि जामात ऐशकात जारू। धई तायाही मण्यूर्व इकेटल इशली नमें ब जीरव्य कलाजा रिरवियो রাজার দ্বারা তাহার দুই পাশ্বে খাও কোশ পর্যান্ত লো ছত্র। যায় বে কিঞ্চিদ্যিক এক শত বৎসর পূর্কে এই কের যে যথেষ্ট উপকার হইবে তাহার নন্দেহ নাই অর্থাং স্থান নিবিড় জন্মলে আর্ত ছিল। মৃত জনিদার মহাত্ম। প্রায় উহাই দারা জয়নগর খানার সমস্ত লোকের টেপকার হইবে। জয়নগার থানায় প্রায় ৫৫ পঞ্চায় হাজার लांकित वाम। अभ्व वाकात य ममस लांकित कथा मामाना करहाक घत शृ एखत लांवाम स्नान हिल, अमन कि লিখিয়াছেন ত'হার প্রায় সমস্ত লাটের উপকার व्याट्ड। তবে সকলের সমান উপকার নয়, ৩৪।৩৫।৩৯। ४०। ४: १४२ लाए छेत्र यः था छे छे भका त। व १ छेत्र। जा लू एक त था श ৫० शक्षाण इंग्लात विद्या किमित छेश्रत इंहेरिक। (कतन धे त्रांखारित गर्धाः हिन्दाक्रिंग जलनिकानी अ माल्जी शंगनाशंगत्नत निमिल मिल् निर्माण कता जार्यणाक। जी द्राख्यात प्रात्रात राष्ट्रानीत श्विणादत (य ममख ना छ धक्करन जन्म जोर् जार्ड जारा रामनागमत्नत स्विधा (इज् म ममूमश मज़त जानाम इहेर का। धे तां छां हि किञ्चि पिक्त पित्रा व्यर्शि (शाएवर्गि अ व रेगि अ रेगि अ श्रादित छिशद मिशा काछ। श्राद्यात छात मिशा श्रेटल मामिडी र भाश अ द्वांख। এवर जल निकामी त अ स्विधा इरेड ध्वर जूभित काधिक मूला मिए इरेड ना। धी ञाक्षाल वात्र माम भानजीत तास्त्र। थाक न', छेक मश्था অগ্রহায়ণ পোষ এবং মাঘ মাসের কিছু দিন শালতী शमनाशमन कविएक शांता यांत्र। अहे कांत्र । अछारिनत अगरा हाडेल धारा जक कालीन शांद्धित हाहे, वांहेतात कत्रिए इया अधिक ठाउँल आभनानि इहेल जूल छ य (ला रिक्स कि दिए इस्। छेक जिन माम जिस जाम-मानि ब्रिश्वानि वन्म इहेश्रा याूश। क्लिकां ठा इहेट गांडि ভिन्न जामनानि देखानित (कान डेणांग थारक ना। छे পরে। ক্ত হাট সকলে যে সমস্ত চাউল আমদানি হয় তাহা শালতীর ছারা চেতলায় যায়। চেতলা হইতে গাড়ি করিয়া পোস্তাও কলিকাতার কোল হাউদে लहेश याहेट इश । लाल जीत शथ ना थाकिटल ३৫ । ३५ क्रांभ गाड़ीएड लहेश। याहेएड ह्या जे ममख हाएडेत

श्रीश शिंठ ছয় জেশ जलत इहेट ठाउँल जाति। र्थ त्रांखा श्रञ्ज इक्त वात माम वानिजा व नित्क । 3५ (क्लांभा भाष) कतिया ना नहें वा महिष्मातिएक ए। ५ क्लिंग याहेल जक कालिन लोकात बाता পांछ। ज्या इण्डेटमत निक्छे शमन कतिएड शांतिएक । एडडना इइएड य शाफ़ी जाफ़। लाशिक कारा वात लाशित न। ववश श्राक्षात्र शिद्र २ श्रिविध। यङ ठाउँ विकास क्रिट्ड शाहित्वक। इंशिट्ड पथ्राभाषित श्राहित मालिएकत किছ का जाहि मत्न श्री किन्छ खेजामिशोब যু:খন্ত উপকার। ভারতসংস্কারক লিখিয়াছেন যে क्षिक्षानित यान जार्ड डाइरेड शंगनाशंगन इहेट পারে কিন্ত তাহার ধারে এত জঙ্গল যে রাত্তে দূরে शाकुक मिन्दा इइ এक জन ल्यांक शंगन कतिएंड शाद्र ना এवर তাহার উপর গৰু বাছুর উঠিলে পুল বন্দির जामनाता (म ममुमग्र (थांशां ডिट्ड मिग्रा थांटकन। जगीनात्रि यि मगछ बान्स जार्ड जारात्र छेथेत छेठित्ल धो तथ इहेशा भारक। ভाइड मश्काइरकत अভियाग स् मिशंबद बावू ज्यार्थ माध्यात निमिन धरे ताछ। ध्यञ्ज कवा हेट उद्धन अवश दि। ए भिरम प्रवास राजा विकास विकास वाधा इहेगा गठ नियाहिन। रमभन्गा धहे जानूरताध अभाकतिया थाकिए भारत भाष ए ता छ। ने जारा इंडेक ७९शदत काश्वामितात शतम्भदित किमिनातित मरधा बाखा इहरवक कांत्रग क्टल এड छोका मजूड नाहे य धक को लिन गमछ जमी ना बिद्य मदभा गकल दो छ। श्रञ्ज

धो राखांब जिन मूना नहेर्वन न, देश कालक्षेत्र इत्र चूजतांश जाम शेकाल इहेरवक। यनािश जार्थ जाहां त जमीन। तीत्र माधा ताछ। इहेवात निमिन जामात्राध कितिता थारकन ७८व जांशार्ज कान (म.स म् छ कित्र म। क्री इरिमाम मंख । याजिलाश्र ।

গোবরডাঙ্গা ।

ज्यानीय भाष्ठक ब्रम्म माज्ये विश्व एवं विश्व का সারদা প্রসার বারুর পিতামহ খেলারাম মুখোপাধাার यहकारल এখানে जानिया প্রথম ব'স করেন তখন ইহা প্রায় তানেকেই ইংগর নাম জানিত না। তৎপরে ভাষার পংলোক গমনের পর ভাষার পুত্র বাবু কা ল श्रमत्र मुत्थाथाथाय किছू मिन जिभिमाती करत्र। यमि अ जिनि धक जन विथा। ज वाङ्कि ছिल्निन व्रिष्ठ जाँश्र मभारत (मन्यू कान छेन्न जिन्ना मिक इस नाई। जाइन शृब्यु ज वायु मार्म। श्रमन मू (श्राशाशाश य अक जन প্রাতঃস্মরণীয় ব্যক্তি ভরিষ্য়ে অনুমাত্রও সন্দেহ নাই। शिवत्र ए। स्वात जाना। शिया है। कि हु ऐन जित्र विवत् विवत् विवत् वाथा। व इत्र व मत्रमात्र ऐक (मन हिट्डियी महा प्रा कर्क् क जानुष्ठिछ। डाँश्रंत প্রতিষ্ঠিত ইংরাজি विमा-लश, দাতব্য চিকিৎসালয়, পোদ্যাফিদ প্রভৃতি শত শত कीर्डि कलाश डाँश्व खाउः यदगीय नाम हिद्रभावगीय क्रिया ताथिया एए। अहे मकल कीर्छित (कान ज़र्श विश्व छेशिष्टिक इहेटल कां हां त जल इक देश खरी कुछ ना

প্রায় ২০ বৎসর অতীত হইল উপরিউক্ত মহাত্মার यएक अ मार्था अथात्न अकना देश्यां विमान्य সংস্থাপিত হইয়াছে। তদৰ্ধি প্ৰায় প্ৰত্যেক বৎসরেই प्रदेश जिन्ही हा तिहा क तिहा । हा व अरविश्व श्रीका श छे छी । इहेश जा मिट ज एक । का न कि ज क व व क व व क व व , इं जिल्लां छ छ करिया किल। यश्चा माद्रमा श्रमा श्रमा वार् की विक्रभाग अग्न (मिटक हित्रि हिल्लन, नर्वि का विकाल ग পরিদর্শন, জানুপযুক্ত শিক্ষক ভ্রীকরণ এবং উপযুক্ত कर्मक्रम लिकक निर्शिश প্रज्ि कार्या करिएजन बलियाई विमानिश क्रमभाई ऐन्नजावस्था श्रमार्थन कर्त्र व्यवश्यति-শেষে ' উচ্চ শ্রেণীস্থ কিল্যালয় ' মধ্যে পরিগণিত হয়। ञावत्नार्य ञागात्मव, ञ्रधु ञागाःमव (कन, दमनंश्र यावजीय तमारकत प्रकाश वर्षा वर्षा किन मानवनीना मध्रवं क्रिल्न। जामामिश्य विमान्ध्य छेन्नजित वाभा ७ ७६म इठवी इरेड वावस इरेल । एवा ठ ভূতপূর্ব কয়েক জন স্থাশিকত হেড মাষ্টারের যত্নে ও পরিশ্রমে কোন রূপে পূর্বে গোরবের অধিকারী হইয়া আর্থিতেছিল; কিন্তু অধুনাতন ইহার আভান্তরিক অবস্থ। (यज्ञ १ (च्यां इनो इने इने इने इने विकार के विकार विकार के विकार क नित्रोक्तन ना इय ज्य এই वात्र "मगूलन विननाजि।" वाजाति धहे तथ वाडे य वर्जमान (इफ माम्हेत "निन-য়ার জ্বলার " কিন্তু কার্যো কত দূর উপযুক্ত তাহা विलिएक भौति गा। তবে আমগ্र देश अहत्क मिथ-তেছি যে প্রথম জেণীর গাণিত শিক্ষা দ্বিতীয় শিক্ষক কর্ত্তক নির্বাহিত হয়। বিদ্যালয় সম্মীয় কোন मागाना विविभाव लिथिए इस्लिस विजी तिक्क गर्-শয়ের প্রয়োজন হয়। সুযোগ্য মেহর বাবু কুঞ্জবেহারী ठिष्ठेशांशांश विमालां ता वार्षिक श्रीका धाइन करिश, (इफ माखोत मश्रामात य विजीत त्यानीत नामकत्रन শিক्ষা দিতেন দেই দ্বিতীয় ভোলীর ব্যাকরণ সম্বন্ধে मखवा श्रेख्यक व्यमाखायकत जाव ध्रकाभ कर्त्रम, ज्रर वर्जभाग वर्ष मिडे बिडोश (आगीत वाक्तर विका चूरमाशा विजीय लिक्क महालेखात हर्ख बाख कता इइशाट्य।

ञावटलंदय ञांग। मिरांत व क्वा अहे (य, यमि कूल विखातात कर्ल् शकाश व विश्व इइटड श्राद्धां कर्त्व

তবেই আমরা পরিতাণ পাই এবং এক জন মহামার यू भइ ९ ित याद भी व की दिं अ वित्नां शिं इ इ न ।।

> গোবর ডাঙ্গ। व इ व ं लान। - B: -361951

यू त शां क कर्क् भा ति द्वा यक शांना ।

মহাশ্র, আমরা সাতিশয় আহলাদ সহকারে প্রকাশ করিতেছ (य, যুবরাজ প্রিন্স অব ওয়েলস ভারতবর্ষে শুভাগমন করিয়া দিল্লী, আগারা ও নেপাল हिताहरतत कागरम्भ उँ। इंत जासूमामी (मनकन (मृत अि महरू इहेश वाकि विल्लास (यक्तश शूतकात्र धानान कशिशाद्विम जाङ्ग नाञ्जनिक প्रभाशमनीश। (वाध कवि भक्षनंत क्यानिया। मकुक क्वेट क्यादान (य, व्याश्वांत क्शिति विशिष्ठ । यो निमाखा ७ जा शंजवर्म इ भागविष (जात्यद्वदल व कार्या अ शास्त्राचा त्रांचा खोयुक वां व जार्या तमाथ हा छ। भाषात महा नं स युव वार् जा का ना शामाखा नियुक इडेश (यक्त किन शिवधम अ यर्ज़न সহিত কাষ্য সমাধা করিয়াছিলেন তাহাতে যুবরাজ সন্তম্ इडेश भारित जासिक असा गाँचा हारक एक है। (मानात ' एन उ (मः फल ' श्रामान क्रिया हिन। (मरफल ही व थक मिरक युवता एक त मन्भूर्ण नाम ज इड ७ जभत निरक विणिम त्राज लक्न न्नामी करत मूजि वार्छ।

আগার। (० श्यान । १५।)

व्यशिकां ।

মহাশয়,

शंक श्वक्यां व वां वि थां । १३ छोत मगत मोत्र जिलि । জেলার অন্তঃপাতি, খরদান নামক স্থানের বাজার মধ্য-छिउ জिनिक (माकानमाद्रित घट्त इठा९ अधि लाशिशा, मिन्ने जियि श्वन (पर्वत मन्द्र अ क्षा अ क्षा अ क्षा अ क्षा अ করিয়া পরিবাপ্ত হয়, যে তথাকার বাজার মধান্থিত शाखात छे छत्र शाख्य इ नाना मामधी शूर्व विश्वि (धानी, कांत्र ममख घत्रहे कांग्रे निर्मिंड, (महे (हजू जननानिन উভয় শাখায় যখন গ্হোপরি আপন্থ প্রচণ্ড প্রভাপ প্রবলবেগে প্রকাশ করিতে লাগিল, তথন জীব মাতেই প্रालग्न जार्थ जीयर जीयन नहेश शलांशन करिएंड लाशिल। कार्शत माथा (म जा. छ: जेत मना एथ शमन करत। किन्छ आंगारिन व महान् ि छिशू हो किमन नात ग्रहा-দর তথার উপস্থিত খাকিয়া, হত্ যত্নে অগ্নি নিবারণ क्रिति (इस्टें) क्रियां अ, मक्स ख्रम इहे (उ शादिन नाहे, कांत्रन जल ভाব। পাছাড়ে বহু দিবসাবধি রুফি ছর नाई। (मई (इंजु शर्वज्ञ नियांत्र मकल श्वाप्त २ (वर्क-वरित्र शुऋ इहेश शिशाट्ड, धवर जन्नाता (य धभारन मकेल (लारकंत्र के जल कछे इहेग्राएक जारा 'लाथा वाङ्ला। ऋरथंत विषय (य এ প্রকার ভরানক অधि कार्ण अकिंगि मनुशा जीवन नमें इस नाई। क्रिज यश-शिद्रांनां खि इड्यां एक, (कानर एमाकानमात्र अक्रवाद्र मर्सन्या उ इहेग्राट्ह।

খরসান বাজারটা জীলজীয়ুক্ত বর্জমানাধিণতির जिथिकांत्र गरंथा। विक्रांनां थिशिजित मान भीलें यथन (দশ অতিক্রম করিয়া, বিদেশ পর্যান্ত পরিন্যপ্ত হইরাছে ज्थन जिनि (य जीय प्रकृ প্रकामित्रात अ तथ प्रमा मिथिशा छेमाभीन इहेरवन छोडा कथन मखरवना। मह (इज्, महानग्र! गानूकच्या श्रकारम यमाथि छेल तिछेल वियशिंग छ न भी श शिं किंग भार्य छ न माल छ। इपत यमाकर्षण कड़िएड शाद्यम जाशा इहेटन जामता दित क्रड-खा उत्तर भश्भाः तत (मन हिटेजिय जात कन जाती इहे (उ मक्रम इरे। किम्राधक मिडि।

माद्रिकिलिश) धका ख वन्यन ३२ (न रेठिख रे मन १२४२।) बिद्यामाम गूर्थापाश ।

वहे शिवका कलिकाछ।, वाशवाजात जानम ह ठा हिर्यां त्र शालि २ नर वाणी इहेट अ अ जि त्र स्माजिवात किष्य नाथ द्राय घात्रा धकानिक इत्र